6 संकट का प्रभाव और भारत में नीतिगत अनुक्रिया : संपदा क्षेत्र

6.1 इस अध्याय में अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र पर व्यापार एवं पूँजी प्रवाह सरणियों के माध्यम से पड़ने वाले वैश्विक संकट के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। संकट का व्यापक स्वरूप विकसित, विकासशील और उभरती सभी बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक जीडीपी की वृद्धि दरों में आयी गिरावट से स्पष्ट होता है। लगभग 130 देशों में वर्ष 2007 की तुलना में वर्ष 2008 में जीडीपी वृद्धि में गिरावट देखी गयी और लगभग 166 देशों में वर्ष 2008 की तुलना में वर्ष 2009 में वृद्धि दर में गिरावट देखी गयी (वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक, आईएमएफ, अप्रैल 2010)। हाल के संकट के दौरान व्यापार सरणी का महत्त्व इस बात से स्पष्ट था कि विश्व-व्यापार-वृद्धि वर्ष 2007 के 7.3 प्रतिशत से गिर कर वर्ष 2008 में 2.8 प्रतिशत और अंतत: वर्ष 2009 में ऋणात्मक 10.7 प्रतिशत हो गयी।

6.2 अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की तरह सब-प्राइम संकट का आरंभिक प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र पर अपेक्षाकृत मंद रहा, क्योंकि आरंभ में संकट अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में उथल-पुथल तक सीमित था। सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद बाह्य वातावरण में अचानक परिवर्तन हुआ, जिसने भारत को व्यापार, वित्त और विश्वास सरणियों के माध्यम से अन्य ईएमई की तरह प्रभावित किया। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संकट के वैश्विक रूप से अधिक तुल्यकालिक होने के साथ यह प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में सिकुड़ते व्यापार और पूँजी प्रतिवर्तन के संदर्भ में और गंभीर हो गया। इस चरण के दौरान, वैश्विक वित्तीय आघातों में तीव्रता आयी और यह क्रमिक रूप से अभूतपूर्व विश्वव्यापी आर्थिक मंदी में परिणत हुआ और इसने व्यापार को और उसके बाद संपदा-क्षेत्र कार्यकलापों को प्रभावित किया। उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, संपदा क्षेत्र पर व्यापार एवं पूंजी प्रवाह सरणियों के माध्यम से वैश्विक संकट के संचरण तथा अंतत: इसके बचत, निवेश और वृद्धि पर प्रभाव का मूल्यांकन इस अध्याय में किया गया है।

6.3 इस अध्याय को निम्नलिखित रूप में व्यवस्थित किया गया है। खंड I में संपदा क्षेत्र पर वैश्विक आघात की विविध सरणियों के माध्यम से संचरण का परिप्रेक्ष्य दिया गया है। खंड II में, व्यापार सरणी से उत्पन्न प्रभाव का विश्लेषण ब्यौरेवार किया गया है, जबकि वित्तीय सरणी के माध्यम से स्पिलओवर के विस्तार का विश्लेषण खंड III में किया गया है। व्यापार और पूँजी-प्रवाह प्रतिवर्तनों के बचत, निवेश और वृद्धि पर प्रभाव को खंड IV में शामिल किया गया है। खंड V में समापन टिप्पणी दी गयी है।

I. वैश्विक आघात का संपदा क्षेत्र में संचरण

भारत में समग्र मांग की संरचना में बदलाव

6.4 जब तक वैश्विक संकट उपस्थित नहीं हुआ था, तब तक भारतीय अर्थव्यवस्था 1990 के दशक से अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलेपन के बावजूद विविध प्रतिकूल बाह्य गतिविधियों के प्रति उल्लेखनीय समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन कर रही थी। इस समुत्थान-शक्ति के अनेक कारण थे। पहला, वृद्धि की प्रक्रिया में देशी मांग की अभिभावी भूमिका होती थी (सारणी 6.1)। दूसरा, स्वतंत्रता के प्रथम चार दशकों के दौरान देशी मांग की अगुआई निजी उपभोग द्वारा की जाती थी। तीसरा, निवेश मांग के एक बड़े भाग का समर्थन देशी बचत द्वारा किया जाता था। चौथा, सेवा क्षेत्र, जिसकी अगुआई देशी मांग द्वारा की जाती थी, समग्र आर्थिक वृद्धि की स्थिरता में योगदान करता था। पाँचवाँ, वित्तीय क्षेत्र में बैंकिंग क्षेत्र वित्तीय मध्यस्थता प्रक्रिया के एक बड़े हिस्से के

सारणी 6.1 : भारत में समग्र मांग की संरचना में बदलाव

(1999-2000 की कीमतों पर जीडीपी में प्रतिशत)

	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	निवेश	निर्यात	आयात
1	2	3	4	5	6
1950का दशक	89.0	5.6	12.5	6.1	7.5
1960का दशक	82.9	7.8	16.9	4.0	5.7
1970का दशक	77.6	9.8	19.4	5.7	5.0
1980का दशक	75.9	11.6	20.2	6.5	7.1
1990का दशक	67.6	11.7	23.3	9.3	10.3
2000का दशक	60.7	11.0	29.9	17.6	19.2
2007-08	58.5	10.3	38.2	21.6	26.2
2008-09	59.5	11.5	34.9	24.5	30.7
2009-10 (संअ)	58.0	11.6	34.7	19.3	23.8

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार ।

लिए जिम्मेवार होता था, जिसका अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में कोई महत्त्वपूर्ण एक्सपोजर नहीं होता था।

6.5 1990 के दशक के अंत की घटना के विपरीत हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था से संबंधित परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन ला दिया। व्यापार और वित्त के खुलेपन में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी के चलते वैश्विक गतिविधियाँ अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण हो गयीं (सुब्बाराव, 2009; रेड्डी, 2007 और 2008)। 1980 और 1990 के दशकों की तुलना में चालू दशक के दौरान भारत में समग्र मांग में निर्यात और आयात के हिस्से में तेजी से वृद्धि हुई है; दूसरी ओर, इसी अवधि के दौरान निजी उपभोग का हिस्सा कम हुआ है (सारणी 6.1)। समग्र मांग में संरचनात्मक बदलाव के परिणामस्वरूप, भारतीय अर्थव्यवस्था पूर्व की अवधि की तुलना में अब बाह्य आघातों से अधिक असुरक्षित हो गयी है। जैसे ही हाल के वैश्विक संकट के सभी क्षेत्रों में व्यापक प्रभाव के साथ उसकी गति में तेजी आयी, उसकी झलक भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में गिरावट में स्पष्ट दिखाई दी। भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में तेजी से नरमी आकर वह वर्ष 2008-09 में 6.7 प्रतिशत हो गयी और इस प्रकार वह वर्ष 2006-07 के अपने शिखर-स्तर से 3.0 प्रतिशत अंक तक कम हो गयी। इसके साथ-साथ निजी उपभोग और निवेश कार्यकलापों की वृद्धि दरों में भी महत्त्वपूर्ण रूप से नरमी दिखाई पड़ी।

वियोजन परिकल्पना की युक्तियुक्तता

6.6 किसी अर्थव्यवस्था के वियोजन के लिए अन्य देशों के साथ इसकी व्यवसाय-चक्र समकालिकता में महत्त्वपूर्ण गिरावट का होना आवश्यक होता है, जिसका अर्थ यह है कि इसका व्यवसाय-चक्र दूसरी अर्थव्यवस्था/ग्रुप के व्यवसाय-चक्र से स्वतंत्र रूप से गमन करता है। हाल के वित्तीय संकट के दौरान पूरी दुनिया के नीति-निर्माता और अनुसंधानकर्ता प्रारंभिक चरण में इस बात पर वाद-विवाद कर रहे थे कि क्या भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से वियोजित हो चुकी हैं। तथापि, जैसे-जैसे वित्तीय संकट बढ़ता गया और क्रमबद्ध रूप से पूर्ण आर्थिक मंदी में ईएमई समेत लगभग सभी देशों को समेटता गया, वैसे-वैसे उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के वियोजन के विरुद्ध वाद-विवाद को विराम लगता गया।

6.7 यह तर्क दिया जाता रहा है कि वियोजन की परिकल्पना इस विचार के विरुद्ध चलती है कि वैश्वीकरण व्यापार-सहबद्धता और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय एकीकरण को बढ़ाता है, जिससे देश-विशिष्ट आघातों के सभी देशों में तगड़े संचरण की गुंजाइश होती है और इसीलिए तगड़ा व्यवसाय-चक्र सहगमन होता है (वाल्टी, 2009)। कोसे, ऑट्रोक और प्रसाद (2008) भी यह उल्लेख करते हैं कि व्यापार और वित्तीय प्रवाह के प्रति अधिक खुलापन से सभी अर्थव्यवस्थाओं को बाह्य आघातों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए और इन आघातों की सरणी को व्यापक बनाते हुए इन्हें सभी देशों में पसरने के लिए वैश्विक आघातों की अनुक्रिया के रूप में सह-गमन को बढ़ाना चाहिए[1]। इसके विपरीत वियोजन परिकल्पना के प्रस्तावकों की यह मान्यता है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की गतिविधियों के प्रति कम असुरक्षित रह गयी हैं, जिसका कारण है देशी नीतिगत ढाँचे को सुदृढ़ किया जाना, जिसके चलते उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ न्यून व्यवसाय-चक्र सहगमन होता है।

6.8 वाल्टी (2009) ने अनुभवमूलक रूप से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और कुल चार समूहों - सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, जी7 देशों, अमेरिका और यूरोपीय संघ - के बीच व्यवसाय-चक्र समकालिकता के अंश की जाँच की, जिसके लिए वर्ष 1980 से 2007 तक के आँकड़ों का चयन किया गया था। इसका निष्कर्ष यह निकाला गया कि वियोजन एक मिथक है, क्योंकि व्यवसाय-चक्र समकालिकता में सामान्यत: कोई गिरावट कालक्रम में और निश्चित रूप से हाल के वर्षों के दौरान नहीं आयी है और, इस प्रकार, उभरते बाजार उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से पृथक नहीं हुए हैं[2]। इसी प्रकार रोसे (2009) ने 64 देशों में व्यवसाय-चक्र की क्षेत्रपार समकालिकता के अंश की जाँच की, जिसमें वर्ष 1974 से 2007 तक के वार्षिक

[1] उन्होंने यह पाया कि वैश्वीकरण-पूर्व अवधि (1960-1984) की तुलना में वैश्वीकरण अवधि (1985-2005) के दौरान औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं और ईएमई, दोनों में समष्टिआर्थिक उतार-चढ़ाव के लिए वैश्विक कारक कम महत्त्वपूर्ण रह गया है और, इसके विपरीत, समूह-विशिष्ट कारकों का महत्त्व उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया है।

[2] जांच के परिणामों का तात्पर्य नह नहीं है कि व्यवसाय-चक्र समकालिकता स्थायी रूप से वर्तमान स्तर पर बनी रहेगी, या समकालिकता में भविष्य में और वृद्धि होगी। जब तक वर्तमान वैश्विक मंदी का दौर चलता रहेगा, तब तक समकालिकता में गिरावट की उम्मीद वर्तमान साक्ष्य को देखते हुए नहीं है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि व्यवसाय-चक्र इस प्रकार की कालावधि में अधिक समकालिक हो जाते हैं (वाल्टी, 2009)।

आँकड़े लिये गये थे और यह पाया कि पूरी दुनिया के देश कालक्रम में अधिकाधिक निकट आ गये प्रतीत होते हैं, कम नहीं। यह भी तर्क दिया गया कि आर्थिक कार्यसंपादन में अपसरण के निदर्शन के रूप में प्रस्तुत साक्ष्य, जिसे वियोजन के रूप में निर्दिष्ट किया गया था, निश्चयात्मक नहीं है (कॉहन, 2008)।

6.9 बढ़े हुए वैश्विक एकीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में उतार-चढ़ाव को विश्व-अर्थव्यवस्था की वृद्धि में उतार-चढ़ाव के साथ संबद्द कर दिया है, खासकर 1980 और 1990 के दशकों की तुलना में वर्ष 2001-2008 की अवधि के दौरान (सारणी 6.2)। यह उल्लेखनीय है कि भारत और विश्व में वृद्धि के बीच बढ़े हुए साहचर्य का एक बड़ा हिस्सा उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं से उद्भूत हुआ, जैसाकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उनके सहसंबंध में काफी बढ़ोतरी में प्रतिबिंबित होता है।

6.10 भारतीय अर्थव्यवस्था की शेष विश्व के साथ बढ़ी हुई समकालिकता हाल की वैश्विक आर्थिक मंदी के दौरान भी इंद्रियगोचर हुई, जिसमें भारत की वृद्धि में गिरावट वैश्विक प्रवृत्ति के बाद दर्ज की गयी, बावजूद इसके कि कुछ उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत इसके पास अक्षत बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली थी (चार्ट VI.1)। इससे यह सहज ही प्रकट होता है कि, वर्तमान संदर्भ में, वियोजन की परिकल्पना भारत और अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के मामले में युक्तियुक्त नहीं भी हो सकती है।

सारणी 6.2 : भारत और विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि के बीच सहसंबंध

अवधि	विश्व अर्थव्यवस्था	उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ
1	2	3	4
1980का दशक	0.43	0.52	-0.02
	(1.4)	(1.7)	(-0.1)
1990का दशक	0.59	0.60	0.51
	(2.1)	(2.1)	(1.7)
2001-2008	0.92	0.71	0.96
	(5.8)	(2.5)	(8.4)

टिप्पणी : कोष्ठक में दिये गये आँकड़े टी-स्टैटिस्टिक्स सूचित करते हैं।
स्रोत : वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक।

चार्ट VI.1 : जीडीपी वृद्धि की प्रवृत्ति

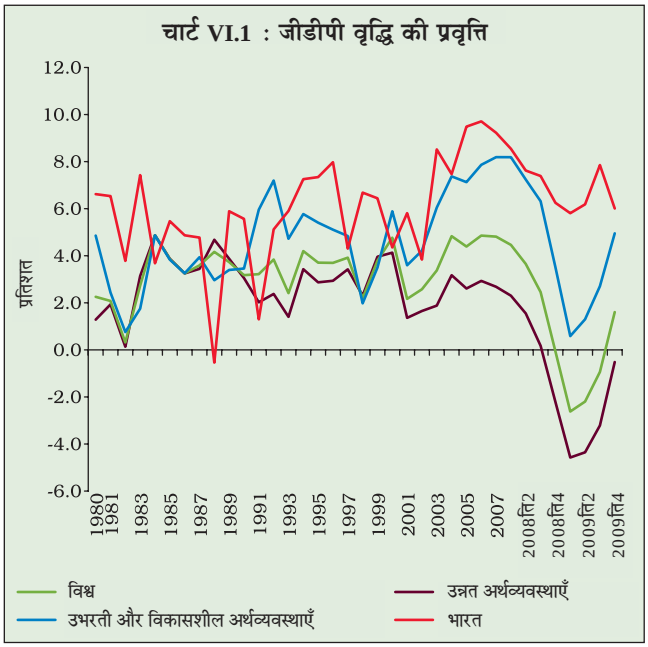

6.11 भारत के मामले में वियोजन परिकल्पना की जाँच इसकी जीडीपी में वृद्धि और व्यापार की अन्य देशों के साथ समकालिकता का अनुमान लगाते हुए की गयी है। यह पाया गया है कि अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उन्मुक्त हुए वित्तीय संकट और मंदी से भारत वियोजित नहीं हुआ, जैसाकि हाल की अवधि के दौरान विश्व-अर्थव्यवस्था, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं तथा उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के साथ इसकी आय-वृद्धि में उच्च अंश की व्यवसाय-चक्र समकालिकता से स्पष्ट है, जो वर्ष 2005 की पहली तिमाही से लेकर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक देखने को मिलती है (चार्ट VI.2)। वाल्टी (2009) के निष्कर्षों से भी यह प्रकट होता है कि भारत उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के चार समग्र समूहों, यथा, सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ, जी7 के देश, अमेरिका और यूरोपीय संघ[3], के संबंध में वियोजित नहीं हुआ।

6.12 पुन:, भारतीय अर्थव्यवस्था के उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से वियोजन की छानबीन करने के लिए विकसित होती द्विपक्षीय व्यवसाय-चक्र समकालिकता का अनुमान लगाने में तिमाही जीडीपी और उपभोग के आँकड़े वर्ष 1996 की दूसरी तिमाही से लेकर वर्ष 2009 की पहली तिमाही तक के लिए

[3] कुल मिलाकर, एशियाई क्षेत्र में किसी भी उभरते बाजार के बारे में यह नहीं कहा जा सकता है कि इसका वियोजन उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से हुआ है; प्रत्येक देश के लिए उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का कम से कम एक ग्रुप हमेशा रहा है, जिसके संबंध में समकालिकता में कमी नहीं आयी है।

चार्ट VI.2 : भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (2005ति1 - 2009ति2)

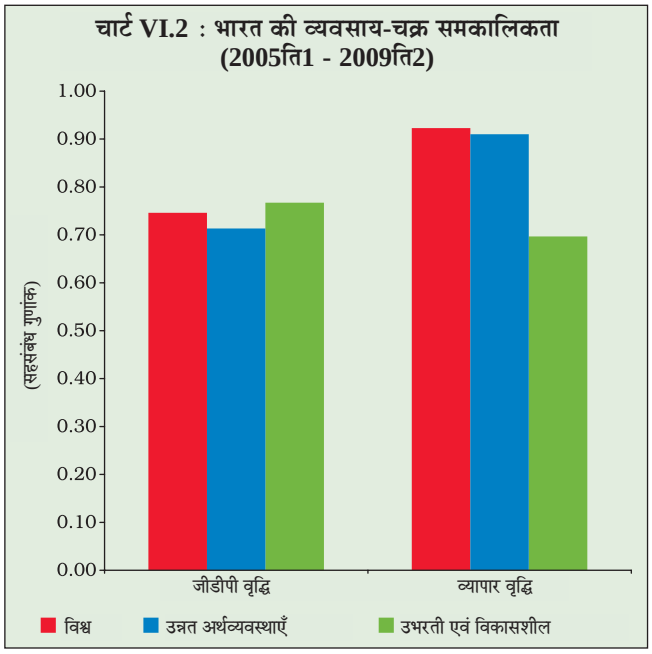

लिये गये हैं। यह पाया गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की अधिकांश उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ व्यवसाय-चक्र समकालिकता (जीडीपी के संदर्भ में) कालक्रम में बढ़ी है, विशेष रूप से हाल की अवधि में (2006ति1-2009ति2) (सारणी 6.3)।

सारणी 6.3 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (जीडीपी वृद्धि)

देश	1996ति2-2009ति2	1996ति2-2000ति4	2001ति1-2005ति4	2006ति1-2009ति2
1	2	3	4	5
अर्जेंटीना	0.6	0.4	0.4	0.8
कनाडा	0.4	0.1	0.0	0.8
फ्रांस	0.4	0.0	0.2	0.9
जर्मनी	0.5	-0.1	0.2	0.7
इंडोनेशिया	-0.2	-0.6	0.2	0.1
इटली	0.3	-0.5	0.2	0.9
जापान	0.3	-0.5	0.0	0.8
कोरिया	0.0	-0.4	-0.4	0.6
मलेशिया	0.0	-0.4	-0.4	0.7
रूस	0.0	-0.4	0.2	0.8
युनाइटेड किंगडम	0.6	0.2	0.3	0.9
अमेरिका	0.4	0.4	0.2	0.3

सारणी 6.4 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (पारिवारिक उपभोग)

देश	1996ति2-2009ति2	1996ति2-2000ति4	2001ति1-2005ति4	2006ति1-2009ति2
1	2	3	4	5
अर्जेंटीना	0.0	-1.0	0.4	-0.8
कनाडा	-0.2	0.0	0.0	0.1
फ्रांस	-0.6	0.7	-0.3	-0.8
जर्मनी	-0.2	0.4	-0.2	-0.4
इंडोनेशिया	-0.3	0.3	-0.4	-0.4
इटली	0.1	-0.2	0.3	0.4
जापान	0.0	-0.3	0.0	-0.7
कोरिया	-0.1	0.2	0.0	0.6
मलेशिया	-0.3	0.0	-0.1	-0.5
रूस	-0.4	0.5	0.3	-0.8
युनाइटेड किंगडम	-0.2	-0.1	-0.2	0.1
अमेरिका	-0.1	-0.3	0.2	0.5

6.13 इसके विपरीत, उपभोग के संदर्भ में उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता में उतार-चढ़ाव का क्रम मिश्रित रहा, क्योंकि कुछ देशों के साथ, खास कर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ इसमें कालक्रम में बढ़ोतरी हुई, जबकि अन्य के साथ इसमें गिरावट देखने को मिली (सारणी 6.4)।

6.14 किसी अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के व्यवसाय-चक्र का अन्य देशों के साथ सहगमन का अंश मुख्यतया उनके बाह्य खुलापन और विविध अप्रत्यक्ष सरणियों के माध्यम से एक्सपोजर पर निर्भर करते हुए परिवर्तनशील हो सकता है। भारत का औद्योगिक क्षेत्र बढ़ते वणिक माल व्यापार और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों से प्राप्त बढ़ती पूँजी के साथ विश्व अर्थव्यवस्था से अधिकाधिक असुरक्षित रहता आया है। अत:, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट और बाद में आर्थिक मंदी से उद्भूत संक्रामक के परिणामस्वरूप उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ औद्योगिक चक्र के सहगमन का विश्लेषण करने का एक प्रयास किया गया। इसके परिणाम यह दर्शाते हैं कि उन्नत देशों के साथ भारत की औद्योगिक चक्रीय समकालिकता, जिसमें वर्ष 1995-2000 से लेकर 2001-2005 तक, सिवाय जर्मनी के, तेज गिरावट आयी थी, हाल की अवधि में (2006-2009)[4] में काफी सुधरी। हाल की अवधि

[4] भारत और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइआइपी) के मासिक आँकड़े वर्ष 1995 से 2009 (जून) तक आईएमएफ से लिये गये थे और उन्हें मौसमी रूप से समायोजित किया गया था, जिसके लिए यूएस सेंसस ब्यूरो के एक्स12 अरीमा का उपयोग किया गया था। तब आँकड़े को सामान्य हॉट्रिक प्रेसकॉट फिल्टर के साथ डिट्रेंड किया गया और भारत तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच डिट्रेंडेड आइआइपी के बीच सहसंबंध गुणांक का प्राक्कलन किया गया।

के दौरान भारत की औद्योगिक चक्र समकालिकता जर्मनी के साथ सबसे अधिक थी, जिसके बाद इटली और अमेरिका का स्थान है। दूसरा उल्लेखनीय लक्षण है हाल की अवधि (2006-2009) में प्रमुख उन्नत देशों के साथ औद्योगिक समकालिकता में महत्त्वपूर्ण वृद्धि होना (चार्ट VI.3)। इस प्रकार, उन्नत देशों के साथ समकालिकता के सुदृढ़ीकरण ने भारत के औद्योगिक क्षेत्र के लिए यह कठिन बना दिया कि वह वैश्विक वित्तीय संकट और आर्थिक मंदी के स्पिलओवर प्रभाव से अप्रभावित रह सके।

वित्तीय संकट और संभाव्य उत्पादन

6.15 संभाव्य उत्पादन को गिरती मांग और कम होते निधीयन के माध्यम से सीधे प्रभावित करने के अतिरिक्त किसी वित्तीय संकट का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी हो सकता है, क्योंकि संकट से सामान्यत: नीतिगत अनुक्रियाएँ प्रेरित होती हैं, जो आर्थिक गिरावट से उद्भूत नुकसानदेह प्रभावों का प्रतिकार करती है (रेनहॉर्ट और रोगोफ, 2009)। इस प्रकार की नीतिगत अनुक्रियाओं में आधारभूत संरचना क्षेत्र में निवेश बढ़ाने का लक्ष्य रखा जाता है, ताकि संभाव्य उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सके; इसके साथ-साथ, वे विकृतियों की शुरुआत कर सकती हैं या अत्यधिक जोखिम-ग्रहण को प्रोत्साहित कर सकती हैं। अस्थायी राजकोषीय उपाय सरकार के व्यय के आकार में तथा ऋण के स्तर में स्थायी बढ़ोतरी की अगुआई कर सकते हैं, जो बदले में वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं (अफौन्सों और फुरसेरी, 2008)। अंतत:, नीतिगत अनुक्रियाओं का स्वरूप और डिजाइन संकट की अवधि के दौरान और बाद में संभाव्य उत्पादन के नतीजों का निश्चय कर सकते हैं। होज और अन्य (2006) यह उल्लेख करते हैं कि वित्तीय संकट संरचनात्मक सुधारों के कार्यान्वयन को भी प्रोत्साहित कर सकते हैं, जो बदले में सुधारों के राजनीतिक विरोध को नरम करते हुए संभाव्य उत्पादन को बढ़ा सकते हैं।

6.16 हॉड्रिक-प्रेसकॉट पद्धति पर आधारित संभाव्य उत्पादन का उपयोग करते हुए यह देखा गया है कि वैश्विक आघातों ने भारत की अभिप्रेत उत्पादन वृद्धि को संकट-पूर्व प्रक्षेप-पथ से सीमांतिक रूप से प्रभावित किया है। तथापि, इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि भारत में संभाव्य उत्पादन वृद्धि में कुछ गिरावट चक्रीय गिरावट के कारण हुई, जो वैश्विक संकट के अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने के पूर्व शुरू हो चुकी थी। जबकि अल्पावधि में उत्पादन-पथ पर उत्पादकता वृद्धि में गिरावट का प्रभाव पड़ सकता है, दीर्घावधि में पूंजी-श्रम अनुपात और रोजगार वृद्धि संभाव्य उत्पादन में हानि का निश्चय करेंगे। इस प्रकार, यदि कोई अर्थव्यवस्था अल्पावधि में पूर्ववर्ती प्रवृत्ति की तुलना में उत्पादन में गिरावट का अनुभव करती है, तो यह संभाव्य उत्पादन में गिरावट हो सकती है, लेकिन यह सकल मांग में निरंतर गिरावट का भी प्रतिनिधित्व कर सकती है।

6.17 यह तर्क दिया जाता है कि दीर्घावधि की रोजगार हानि का कारण वित्तीय संकट के प्रति श्रमिक, पूँजी और घटक उत्पादकता की अनुक्रिया को माना जा सकता है (आईएमएफ, 2009)। यदि आघात इतने महत्त्वपूर्ण हों कि वे संरचनात्मक बेरोजगारी का कारण बन सकते हों, तो श्रम बाजारों में संस्थागत अनम्यता को देखते हुए, रोजगार के संकट-पूर्व स्तर पर पहुँचने के लिए लंबा समय लग सकता है, जिससे अर्थव्यवस्था में मध्यावधि में उत्पादकता घट सकती है। दूसरा, संकट के चलते ऋण-विस्तार में और इसीलिए निवेश-दर में विविध सरणियों, यथा, कठोर ऋण मानक, उधार की उच्च लागत, और संपार्श्विकों में कटौती के माध्यम से कारपोरेटों के तुलनपत्रों पर आस्ति-कीमतों का प्रतिकूल प्रभाव, के माध्यम से कमी आ सकती है। तीसरा, उत्पादकता

चार्ट VI.3 : औद्योगिक क्षेत्र की समकालिकता

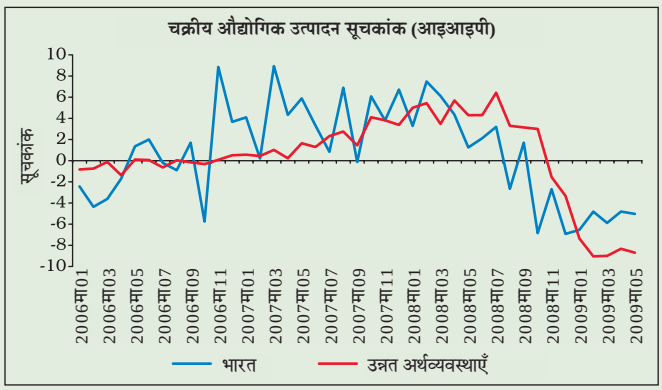

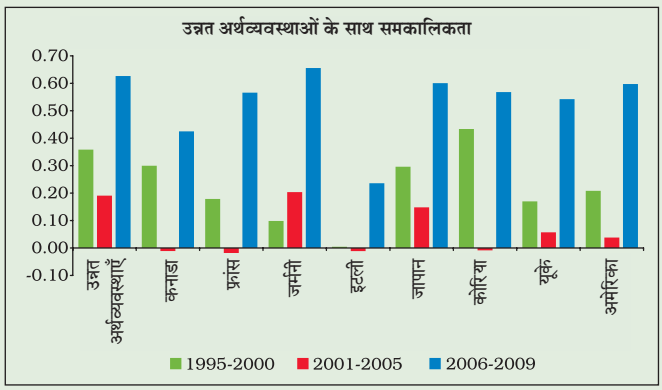

का स्तर नवोन्मेषों की गति में धीमापन तथा अनुसंधान एवं विकास में कटौती के कारण गिर सकता है, क्योंकि कंपनियाँ संकट के प्रभाव के चलते अपनी पुनर्संरचना का प्रयास करती हैं। यद्यपि उप्रयुक्त कारकों का परिमाण-निर्धारण करना कठिन है, भारत में निवेश-दर पर बाह्य आघात का प्रभाव उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तरह उतना प्रतिकूल नहीं भी हो सकता है (बॉक्स VI.1)

बॉक्स VI.1

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की तुलना में भारत में संभाव्य वृद्धि की हानि

संभाव्य उत्पादन सामान्यत: उत्पादन का इष्टतम स्तर होता है, जिसे मुद्रास्फीति पर दबाव डाले बिना नैसर्गिक एवं संस्थागत बाध्यताओं के भीतर प्राप्त किया जा सकता है। संभाव्य उत्पादन को "नैसर्गिक सकल देशी उत्पाद" भी कहा जाता है और यदि अर्थव्यवस्था अपनी क्षमता-संपन्न अवस्था में हो, तो बेरोजगारी की दर एनएआइआरयू या बेरोजगारी की नैसर्गिक दर के बराबर होती है। वित्तीय संकट अक्सर किसी अर्थव्यवस्था के उत्पादन को वित्तीय मध्यस्थता, उपभोग और निवेशों में कमी लाकर तथा व्यावसायिक रुझान को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए प्रभावित करने का कारण बनता है; तथापि, नुकसान की सीमा संकट की गंभीरता और कालावधि पर निर्भर होती है। फुरसेरी और मोरोगेन (2009) द्वारा वर्ष 1960 से लेकर 2007 तक की अवधि के लिए ओईसीडी देशों के संबंध में किये गये हाल के अनुभवमूलक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला है कि वित्तीय संकट औसतन 1.5 से 2.4 प्रतिशत तक संभाव्य उत्पादन को कम कर देते हैं। इसी प्रकार सेरा और सक्सेना (2008) ने 190 देशों में उत्पादन-प्रवृत्ति का अध्ययन कि या और वित्तीय संकट से सहबद्ध बड़ी और निरंतर वास्तविक उत्पादन हानि को देखा, जिसमें बैंकिंग संकट के उपस्थित होने पर 10 वर्षों की अवधि में अपेक्षाकृत 7.5 प्रतिशत तक उत्पादन-हानि हुई। यदि उत्पादन-हानि अस्थायी हो, तो तत्परतापूर्वक और सुधारात्मक नीतिगत उपक्रमण किये जाने से नुकसान की भरपाई हो सकती है और अल्पावधि में ही उत्पादन को उसके पिछले प्रक्षेप-पथ पर लाया जा सकता है। दूसरी ओर, यदि उत्पादन-हानि स्थायी प्रकार की हो, अर्थात्, यदि संभाव्य उत्पादन में संरचनागत भंग हो और वह प्रक्षेप-पथ पर नीचे चला गया हो, ते नीति-निर्माताओं को कठिन प्रयास करने की जरूरत होती है और उत्पादन को पिछले प्रक्षेप-पथ पर लाने के लिए लंबा समय लग सकता है।

हाल के वैश्विक संकट के दौरान भारत में वित्तीय मध्यस्थता के स्तर में महत्त्वपूर्ण गिरावट आयी, जो बैंक-ऋण और इक्विटी बाजारों में आघात, दोनों ही रूप में थी। दूसरा, बेरोजगारी की दर भी बढ़ गयी, विशेष रूप से निर्यातोन्मुख क्षेत्रों में, यद्यपि इसके संबंध में सरकारी अनुमान उपलब्ध नहीं हैं। तीसरा, वणिक माल निर्यात में तेजी से संकुचन हुआ, जिसमें संभवत: उनके पूँजी-स्टॉक और श्रमिक बल का बड़ा हिस्सा निक्रिय पड़ा रहा, यदि निर्यात इकाइयों ने अपना ध्यान देशी बाजारों पर केंद्रित नहीं किया। अत:, उपर्युक्त के आलोक में, अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत के मामले में उत्पादन-वृद्धि में हानि, चाहे वह अस्थायी हो या स्थायी (संभाव्य), का अनुमान लगाना सार्थक होगा।

यद्यपि संभाव्य उत्पादन का अनुमान लगाने के लिए विभिन्न प्रकार की कार्य-प्रणालियाँ होती हैं, इसका विश्वसनीय मापन करना कठिनाइयों से भरा होता है और, इसीलिए, युक्तियुक्तता का मामला अनसुलझा रह जाता है। फिर भी, हॉड्रिक-प्रेसकॉट (एचपी) फिल्टर का उपयोग दीर्घावधि 'ट्रेंड' वृद्धि का पता लगाने के लिए किया गया है, जिसमें वर्तमान संकट के दौरान उत्पादन-वृद्धि में हानि का मूल्यांकन करने के लिए वार्षिक और तिमाही आँकड़ों का उपयोग किया गया है। संभाव्य उत्पादन-वृद्धि में बदलाव, यदि हो, को प्रारंभिक समझा जाना चाहिए और उसके लिए चेतावनी के साथ कोई अनुमान लगाना आवश्यक होगा।

एचपी फिल्टर कार्यप्रणाली पर आधारित संभाव्य वृद्धि के तिमाही अनुमान दर्शाते हैं कि वृद्धि में हानि, जो वर्ष 2008 की दूसरी तिमाही से आरंभ हुई, अलबत्ता सीमांतिक रूप में, वह बाद की तिमाहियों में भी जारी रही, जिसमें हानि वर्ष 2008 की चौथी तिमाही और वर्ष 2009 की पहली तिमाही में लगभग 2.0 प्रतिशत अंक और वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही में 1.4 प्रतिशत अंक की हुई। संभाव्य वृद्धि की प्रवृत्ति से यह सूचित होता है कि उद्योग में वास्तविक वृद्धि वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही में संभाव्य स्तर तक जा पहुँची, जिससे यह इंगित होता है कि वृद्धि में हानि अस्थायी थी। इसके विपरीत, सेवा-क्षेत्र में वृद्धि में हानि अधिक होती गयी। फिर भी, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, ये परिणाम प्रारंभिक हैं और, इसलिए, इनका उपयोग बड़ी सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए। चूँकि सेवा-क्षेत्र जीडीपी में 60 प्रतिशत का योगदान करता है, जीडीपी में संभाव्य वृद्धि सेवा-क्षेत्र की प्रवृत्ति का अनुसरण करती दिखाई पड़ती है (चार्ट 1)।

चार्ट 1 : भारत में वास्तविक और संभाव्य वृद्धि

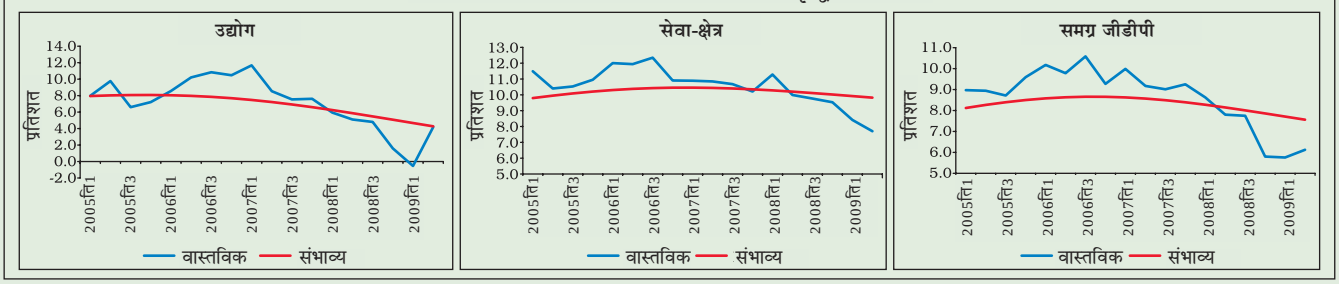

(जारी...)

मलेशिया

रूस

(... समाप्त)

भारत में और कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में संभाव्य वृद्धि का अनुमान लगाने के लिए भी एचपी फिल्टर का उपयोग किया गया, जिसके लिए वर्ष 1980 से 2008 तक के आँकड़े लिये गये थे। भारत सहित अधिकांश ईएमई ने वर्ष 2008 में वास्तविक वृद्धि में हानि का अनुभव किया, जब संभाव्य वृद्धि के साथ तुलना की गयी, जबकि इन देशों ने हाल के वर्षों में वास्तविक वृद्धि में लाभ दर्शाया है (सारणी 1)। वर्ष 2008 के दौरान रूस में वृद्धि में सबसे अधिक हानि हुई, जिसके बाद चीन, अर्जेंटीना, फिलीपीन्स और मलेशिया का स्थान है।

सारणी 1 : ईएमई की तुलना में भारत में वृद्धि अंतराल
(वास्तविक घटाव संभाव्य)

देश	2001-2005	2006	2007	2008
अर्जेंटीना	-1.2	2.0	1.1	-1.6
ब्राजील	-0.4	-0.2	1.1	0.1
चीन	-0.2	1.2	2.3	-1.9
भारत	-0.5	1.7	0.8	-1.5
इंडोनेशिया	0.7	0.2	0.5	-0.2
मलेशिया	-0.4	0.5	1.0	-0.8
फिलीपीन्स	-0.3	-0.1	1.5	-1.3
रूस	-0.1	-0.1	0.0	-2.8

संदर्भ :

1. सेरा, वी और एस.सी.सक्सेना, 2008 "ग्रोथ डाइनैमिक्स : दि मिथ ऑफ इकोनॉमिक रिकवरी"। अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू, 98 : 439-457।

2. फुरसेरी, डी. और अन्नाबेले मोरोगेन, 2009। ' दि इफेक्ट ऑफ फाइनैंशियल क्राइसिस ऑन पोटेंशियल आउटपुट : न्यू इंपीरियल एविडेंस फ्रॉम ओईसीडी कंट्रीज'। ओईसीडी इकोनॉमिक डिपार्टमेंट वर्किंग पेपर 699।

6.18 चालू दशक के दौरान निर्यात के प्रति सकल मांग की संरचना में बदलाव ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक गतिविधियों के प्रति अधिक संवेदनशील बना दिया है। पुन:, भारत की द्विपक्षीय समकालिकता के साथ तीन ग्रुपों, यथा, विश्व अर्थव्यवस्था, उन्नत एवं उभरते तथा विकासशील देश, के साथ व्यवसाय-चक्र समकालिकता निर्णायक रूप से भारत के व्यवसाय-चक्र के शेष-विश्व के व्यवसाय-चक्र के साथ सहगमन के सुदृढ़ीकरण को प्रतिबिंबित करती है और, इसीलिए, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान वियोजन परिकल्पना को युक्तियुक्त नहीं पाया जाता है। पुन:, इस संकट के दौरान भारत सहित अनेक अर्थव्यवस्थाओं ने संभाव्य वृद्धि में नुकसान उठाया। अगले खंड में भारत की अर्थव्यवस्था पर व्यापार सरणी के प्रभाव पर चर्चा की गयी है।

II. व्यापार सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव

निर्यात के माध्यम से प्रभाव

विश्व आय और निर्यात

6.19 संकट के दौरान अंतरराष्ट्रीय व्यापार का दृष्टिकोण बहुत अधिक प्रभावित हुआ और विश्व-व्यापार का कार्यसंपादन वर्ष 2008 की अंतिम तिमाही से काफी दुर्बल हुआ। विश्व व्यापार में वृद्धि की प्रवृत्ति में संकट के दौरान प्रतिवर्तन हुआ और इसमें तेजी से गिरावट आयी तथा यह वर्ष 2008 की चौथी तिमाही से ऋणात्मक क्षेत्र में चला गया। आरंभिक अवधि में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने इस तीव्र ह्रास की शुरुआत हुई; तथापि, उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में भी गिरावट की प्रवृत्ति दिखाई पड़ी (सारणी 6.5)।

6.20 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से बाह्य मांग में संकुचन, जिसका कारण था गिरती आय और बढ़ती अनिश्चितता का उभरते बाजारों और विकासशील देशों में फैल जाना, सहवर्ती रूप से इन देशों के गिरते अंतरराष्ट्रीय व्यापार में स्पष्ट हुआ। मध्य सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के धराशायी होने के पश्चात् अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजार की स्थितियों को कठोर बनाये जाने के बाद भारत के वणिक माल व्यापार पर भी गिरते उपभोग, विशेष रूप से उन्नत देशों में, और व्यापार ऋण में मांग अभावी मंदी का प्रभाव पड़ा। भारत के निर्यात में वृद्धि और बाह्य मांग (विश्व और उन्नत देशों में जीडीपी) के बीच चक्रीय सह-गमन वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान काफी अधिक समकालिक थे (चार्ट VI.4)। यह दर्शाता है कि सामान्य समय में विश्व आय के अतिरिक्त अन्य कारक भी निर्यात की वृद्धि को प्रेरित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जबकि विश्व जीडीपी से उद्भूत प्रभाव संकट के दौरान अभिभावी हो जाता है।

6.21 भारत के निर्यात को विश्व-आय के प्रति अधिक लोचदार होने को देखते हुए संकुचित होती विश्व-आय का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से वणिक माल निर्यात में समग्र गिरावट में प्रतिबिंबित हुआ। अग्रवाल (1970) द्वारा अनुमानित निर्यात मांग फलन के अनुसार आय एवं कीमत-लोच गुणांक क्रमश: 0.35 और -0.44 थे। आरबीआई द्वारा किये गये एक अन्य अध्ययन (2003)

सारणी 6.5 : विश्व व्यापार कार्यसंपादन

(वार्षिक वृद्धि प्रतिशत)

	ति1 2007	ति2 2007	ति3 2007	ति4 2007	ति1 2008	ति2 2008	Q3 2008	ति4 2008	ति1 2009	ति2 2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
निर्यात										
विश्व	13.9	11.6	14.2	18.8	24.8	27.2	23.1	-6.3	-29.3	-30.8
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	13.4	10.9	13.4	16.0	19.7	22.6	16.6	-11.8	-30.2	-31.5
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	15.1	12.9	15.6	24.0	34.7	35.9	34.8	3.5	-28.6	-30.0
यूरो क्षेत्र	16.5	12.3	13.6	16.4	18.3	24.1	15.3	-16.5	-31.1	-34.5
अमेरिका	10.8	10.7	12.2	14.2	17.1	19.0	17.1	-4.2	-22.4	-26.9
आयात										
विश्व	14.0	13.1	14.0	19.4	23.3	25.9	23.3	-7.3	-30.6	-33.1
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	11.6	10.1	10.6	16.4	19.5	22.2	19.1	-11.1	-30.7	-34.6
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	16.3	14.2	14.6	17.0	18.8	22.7	14.2	-16.0	-29.7	-34.2
यूरो क्षेत्र	20.3	20.3	21.7	26.5	32.3	34.2	32.1	1.0	-30.5	-29.8
अमेरिका	4.1	3.7	3.2	10.3	11.4	14.2	14.3	-9.2	-29.9	-34.7

स्रोत : आईएफएस, नवंबर 2007, आईएमएफ

में यह पाया गया कि विश्व जीडीपी-वृद्धि के संदर्भ में भारत के निर्यात के लिए अल्पावधि एवं दीर्घावधि मांग-लोच क्रमश: 0.8 और 1.5 थी। पुन:, नवीनतम आँकड़ों के साथ विश्व जीडीपी के संदर्भ में भारत की दीर्घावधि निर्यात-मांग लोच का अनुमान 3.7 पर लगाया गया (आरबीआई, 2009)। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि उच्च वैश्विक वृद्धि के साथ भारत के निर्यात पर दबाव-कारक काफी बड़ा हो सकता है। विश्व-आय के संदर्भ में निर्यात की उच्च आय-लोच विविध पण्यों में प्रतिबिंबित होती है, जिसमें उनकी लोच में 1980 के दशक की तुलना में सुधार अवधि (1993-2008) के दौरान महत्त्वपूर्ण सुधार दिखाई पड़ता है (सारणी 6.6)।

निर्यात और आर्थिक वृद्धि

6.22 जैसी कि पिछले खंड में चर्चा की गयी, वृद्धि-पथ को आकार देने में देशी मांग की प्रभावी भूमिका होने के बावजूद वृद्धि-प्रक्रिया का अनुकूलन करने में व्यापार की भूमिका कालक्रम में अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण होती गयी, जो हाल की अवधि में व्यापार-जीडीपी अनुपात में महत्त्वपूर्ण वृद्धि से भी स्पष्ट है। आर्थिक वृद्धि पर निर्यात के प्रत्यक्ष प्रभाव का निर्धारण व्यापार के खुलापन तथा निर्यात-वृद्धि में तेजी द्वारा किया जा सकता है, और निर्यात वृद्धि का निर्धारण विश्व-आय के संदर्भ में निर्यात-लोच द्वारा किया जा सकता है (बॉक्स VI.2)।

चार्ट VI.4 : निर्यात और बाह्य मांग

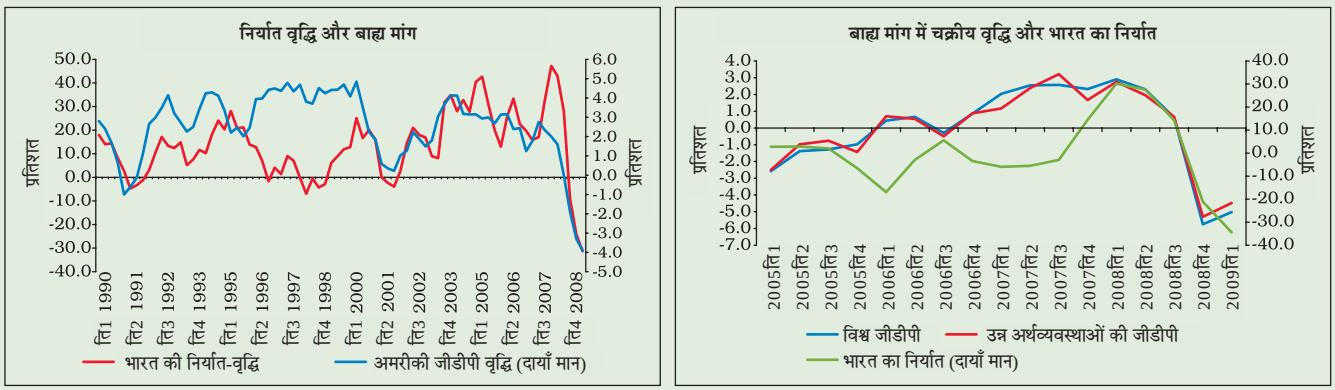

सारणी 6.6 : विश्व आय में भारत के पण्य निर्यात की लोच-अनुक्रिया

पण्य	1980-81 से 2007-08	1993-94 से 2007-08	1980-दशक	पण्य	1980-81-दशक 2007-08	1993-94-दशक 2007-08	1980-दशक
1	2	3	4	1	2	3	4
1. खाद्यान्न	2.7	2.0	0.8	19. टेक्सटाइल यार्न	0.8	1.7	7.2
2. अनाज	3.9	2.6	3.1	20. टेक्सटाइल (सूती से भिन्न)	3.7	1.7	1.4
3. चीनी	0.7	6.7	-10.2	21. टेक्सटाइल सामग्रियाँ	4.2	1.0	0.0
4. कॉफी	1.1	0.3	1.1	22. फर्श आच्छादन	1.8	0.7	2.7
5. मसाले	2.0	2.3	0.0	23. धातु से इतर खनिज	3.4	2.9	3.7
6. तेल-खल्ली	2.6	0.4	2.7	24. लोहा और इस्पात	7.5	3.8	1.2
7. पेय-पदार्थ	1.6	2.0	-2.9	25. अलौह धातुएँ	7.7	7.4	5.6
8. कच्ची सामग्री	4.4	5.5	1.2	26. धातुएँ	4.7	4.0	0.4
9. कपास	2.5	8.4	-3.0	27. मशीनें	5.3	5.2	2.4
10. टेक्सटाइल रेशे	4.2	4.8	5.4	28. गैर-विद्युत मशीनें	5.2	5.6	2.0
11. खनिज (गैर-पीओएल)	3.7	3.6	3.2	29. टेली-उपकरण	6.6	5.5	2.6
12. लौह अयस्क	1.4	2.8	1.6	30. विद्युत मशीनें	5.0	5.9	2.6
13. अयस्क	4.4	6.0	3.1	31. परिवहन उपकरण	5.5	5.8	1.6
14. ईंधन	2.2	7.5	1.5	32. विविध	2.1	2.8	3.0
15. पीओएल	6.1	29.3	9.9	33. परिधान-सहायक वस्तुएँ	2.8	1.3	4.0
16. रसायन	5.3	3.7	3.3	34. पदत्राण	0.9	2.7	7.6
17. विनिर्मित वस्तुएँ	3.3	3.1	1.4	35. विविध	5.3	4.2	2.8
18. चमड़ा	0.8	0.6	2.8	36. सामान्य सूचकांक	3.9	3.7	1.2

6.23 वृद्धि-लेखांकन के ढाँचे के भीतर आर्थिक वृद्धि में निर्यात का योगदान स्वतंत्रता पश्चात् के दो दशकों के दौरान नगण्य था। हालाँकि इसमें कुछ सुधार 1970 के दशक में दिखाई पड़ा था, यह 1980 के दशक के दौरान बना नहीं रह सका। सुधार की अवधि के दौरान

बॉक्स VI.2
निर्यात और देशी वृद्धि संबंध : वृद्धि लेखांकन दृष्टिकोण

आरंभिक साहित्य में मानक वृद्धि लेखांकन दृष्टिकोण पर भरोसा किया जाता था, जो आर्थिक वृद्धि में निर्यात के योगदान को मापने के लिए राष्ट्रीय लेखे पर आधारित होता था। इस दृष्टिकोण के अनुसार, मांग पक्ष की ओर से किसी अर्थव्यवस्था की सकल आय या सकल देशी उत्पाद (Y) में देशी मांग (D) और बाह्य मांग, यथा, निर्यात (E) शामिल होते हैं : $Y_t = D_t + E_t$

इस समीकरण को Y की वृद्धि दर में रूपांतरित किया जा सकता है ,

D, तथा E: $\frac{\Delta Y_t}{Y_{t-1}} = \frac{\Delta D_t}{D_{t-1}} \frac{D_{t-1}}{Y_{t-1}} + \frac{\Delta E_t}{E_{t-1}} \frac{E_{t-1}}{Y_{t-1}}$

अथवा

$$g_y = g_D\, w_D + g_E W_E \qquad (1)$$

इस प्रकार, Y की वृद्धि दर (g_y) का प्राक्कलन देशी और बाह्य मांग घटकों की वृद्धि दरों के भारित औसत, g_D और $g_{E,}$ के रूप में किया जा सकता है। भारांक W_D और W_E पिछले वर्ष में जीडीपी में देशी और बाह्य मांग के हिस्से होते हैं। देशी आर्थिक वृद्धि को वैश्विक आर्थिक गतिविधियों के साथ जोड़ने के लिए मानक निर्यात मांग फलन को लॉग-लाइनर रूप में उपयोग किया जा सकता है।

$$lnE_t = \alpha + \beta\, lnY_t^f + \theta\, lnP_t \qquad (2)$$

जहाँ Y_t^f और P_t विश्व आय और आपेक्षिक कीमतें हैं और पैरामीटर हल और θ क्रमशः विश्व आय और आपेक्षिक मूल्य (देशी मूल्य के सापेक्ष विदेशी मूल्य) के संदर्भ में निर्यात की आय और मूल्य लोच माप होते हैं। यह मानते हुए कि निर्यात का सापेक्ष मूल्य अपरिवर्तित रहता है; निर्यात की वृद्धि दर और विश्व आय के बीच संबंध निर्यात मांग फलन से निम्नलिखित रूप में व्युत्पन्न होता है

$$g_E = \beta\, g_W \qquad (3)$$

अब समीकरण 1 और 3 से हम यह पता लगा सकते हैं कि देशी आर्थिक वृद्धि पर वैश्विक अर्थव्यवस्था का प्रभाव तीन कारकों का गुणनफल हो सकता है : निर्यात लोच, विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर, और देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात का हिस्सा। दूसरे शब्दों में, विश्व आय की प्रत्येक प्रतिशत वृद्धि दर के लिए देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात का योगदान विश्व आय के संदर्भ में निर्यात लोच (विदेशियों की ओर से निर्यात मांग के प्रति झुकाव) और देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात के हिस्से (व्यापार के खुलापन का संकेतक) का गुणनफल होगा।

सारणी 6.7 : आर्थिक वृद्धि में उपभोग, निवेश और निर्यात का योगदान

(प्रतिशत अंक)

अवधि	जीडीपी	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	निवेश	निर्यात
1	2	3	4	5	6
1950-दशक	3.9	3.2	0.2	0.8	0.0
1960-दशक	4.1	2.6	0.6	1.1	0.1
1970-दशक	2.9	2.1	0.5	0.9	0.5
1980-दशक	5.7	3.5	0.8	1.2	0.3
1990-दशक	5.6	3.2	0.7	1.7	1.0
2000-दशक	7.2	3.5	0.4	3.5	2.4
2003-08	9.0	4.0	0.5	5.1	2.7
2008-09	6.7	4.9	1.7	-1.5	4.2
2009-10	7.4	2.4	0.9	2.1	-3.9

टिप्पणी : स्थिर बाजार कीमत पर जीडीपी की वृद्धि दर और इसके घटकों की वृद्धि के जोड़, उपभोग, सरकारी व्यय, निवेश एवं निर्यात के बीच अंतर का हिसाब आयात विस्तार (संकुचन) द्वारा किया जाता है ।

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार

आर्थिक वृद्धि में निर्यात का योगदान 1990 के दशक में बढ़ा और 2000 के दशक में यह दुगुने से भी अधिक हो गया (सारणी 6.7)।

6.24 निर्यात और वृद्धि के बीच संबंध का और अधिक अन्वेषण करने के लिए जीडीपी वृद्धि और निर्यात वृद्धि तथा व्यापार घाटा-जीडीपी अनुपात के बीच ग्रैंजर कार्य-कारण विश्लेषण किया गया, जो 1950-2008 की अवधि के वार्षिक आँकड़ों पर आधारित था। ग्रैंजर कारणत्व परिणामों[5] ने दो अंतर्दृष्ठियाँ दीं : पहला, निर्यात और जीडीपी वृद्धि दर के बीच कार्य-कारण संबंध की दिशा पहले से दूसरे की ओर थी, न कि दूसरे से पहले की ओर और, दूसरा, व्यापार घाटा अनुपात और आर्थिक वृद्धि के बीच कार्य-कारण संबंध की दिशा दूसरे से पहले वाले की ओर थी, जिसका कारण देशी आर्थिक कार्यकलाप द्वारा प्रेरित आयात-मांग की भूमिका को माना जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान प्रौद्योगिकी प्रधान पण्यों के प्रति निर्यात समूह में संरचनात्मक बदलाव, जो भारतीय अर्थव्यवस्था में निर्यात की प्रधानता से प्रेरित था, वृद्धि में उनके बढ़े हुए योगदान में प्रतिबिंबित होता है।

निर्यात और उपभोग

6.25 सकल मांग में निर्यात के प्रत्यक्ष योगदान ने महत्त्वपूर्ण रूप ग्रहण कर लिया और संचरण की व्यापार सरणी का महत्त्वपूर्ण वाहक बन गया है। अनेक देशी और बाह्य गतिविधियों ने, जो वैश्विक संकट के बाद हुईं, निजी उपभोग-वृद्धि में नरमी में योगदान किया (सारणी 6.8)। सकल मांग और वृद्धि पर निर्यात के प्रत्यक्ष प्रभाव के अतिरिक्त निर्यात अप्रत्यक्ष रूप से उपभोग एवं निवेश के माध्यम से वृद्धि को प्रभावित कर सकते हैं। भारत में, निर्यात और निजी उपभोग मांग हाल की अवधि के दौरान निकट संबंध का प्रदर्शन करते प्रतीत हुए हैं।

6.26 ऐसी अनेक अप्रत्यक्ष सरणियाँ हो सकती हैं, जिनके माध्यम से निर्यात मांग उपभोग को प्रभावित कर सकती है। पहला, विनिर्माण

सारणी 6.8 : भारत में निजी उपभोग के कुछ निर्धारक तत्व

(प्रतिशत)

संकेतक	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5
(i) निजी उपभोग	9.0	8.2	9.8	6.8
(ii) कृषि जीडीपी	5.2	3.7	4.7	1.6
(iii) परिवारों को ऋण	52.1	-3.6	-2.1	-4.3
(iv) वैयक्तिक ऋण	40.5	26.8	12.1	10.8
आवास	38.3	24.7	11.6	7.4
क्रेडिट कार्ड	41.3	47.7	44.2	6.1
उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुएँ	-20.9	29.3	-4.2	-7.0
(v) सीपीआई मुद्रास्फीति (आइडब्लू)	4.4	6.7	6.2	9.1
(vi) सीपीआई मुद्रास्फीति (आइएल)	3.9	7.8	7.5	10.2
(vii) स्टॉक प्रतिलाभ	44.2	48.3	35.0	-25.4
(viii) धन-प्रेषण अंतर्वाह ($)	18.4	23.6	41.1	6.6
(ix) यात्रा उपार्जन ($)	17.8	16.2	24.4	-4.0
(x) विश्व पण्य-कीमतें				
सभी पण्य	24.3	15.8	21.6	3.8
खाद्यान्न	1.1	12.7	21.8	6.4
दुबई तेल कीमतें	46.6	14.0	27.0	6.2

[5] **निर्यात और वृद्धि : कार्य-कारण संबंध**

कार्य-कारण संबंध :नल्ल हाइपोथेसिस	**एफ-स्टैटिस्टिक्स**	**परिणाम**
निर्यात वृद्धि जीडीपी वृद्धि का कारण नहीं थी	4.90 (0.01)	अस्वीकार करें
जीडीपी वृद्धि निर्यात वृद्धि का कारण नहीं थी	1.21 (0.31)	स्वीकार करें
व्यापार घाटा जीडीपी वृद्धि का कारण नहीं था	0.02 (0.98)	स्वीकार करें
जीडीपी वृद्धि व्यापार घाटा का कारण नहीं थी	4.19 (0.02)	अस्वीकार करें

क्षेत्र कालक्रम में निर्यात-प्रधान हो गया है। विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात का भारत के विनिर्माण जीडीपी में हिस्सा, जो वर्ष 1990-91 में 27.1 प्रतिशत था, वह वर्ष 2000-01 में बढ़ कर 52.2 प्रतिशत और पुन: वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 72.3 प्रतिशत हो गया है। विनिर्माण क्षेत्र की इस महत्त्वपूर्ण निर्यात-उन्मुखता ने इस क्षेत्र को बाह्य मांग आघातों के प्रति असुरक्षित भी बना दिया है। इसके अतिरिक्त, विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात के एक बड़े हिस्से (42 प्रतिशत) के लिए चमड़ा और चमड़े से निर्मित वस्तुएँ, कपड़ा और कपड़े से निर्मित वस्तुएँ, रत्न और आभूषण तथा हस्तशिल्प जिम्मेदार हैं, जो रोजगार-प्रधान होते हैं, और इन क्षेत्रों में निर्यात के एक बड़े हिस्से में लघु उद्योगों (एसएसआइ) का योगदान है। इस प्रकार, बाह्य मांग आघात का बहुत अधिक प्रभाव ऐसे उद्योगों में उत्पादन और रोजगार पर पड़ता है, जिसका सीधा संबंध देशी उपभोग मांग से होता है। इसके अतिरिक्त, ऐसे अनेक एसएसआइ हैं, जो विनिर्माण फर्मों की आपूर्ति शृंखला पर आश्रित हैं और ये भी बाह्य मांग आघात से अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं।

निर्यात पर प्रभाव : प्रवृत्ति, संरचना और दिशा

6.27 संक्रामक की व्यापार सरणी, जिसने संकट के सितंबर 2008 पश्चात् के चरण में तेजी दिखाई थी, ने भारत के वणिक माल व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव डाला, जिसमें 2000 के दशक के आरंभ की मंदी की तुलना में विकसित देशों की भीषण मंदी के आगे-पीछे के क्रम में निर्यात में अधिक तेजी से गिरावट आयी (सारणी 6.9)।

6.28 भारत के पण्य निर्यात की संरचना में बदलाव के विश्लेषण से कुछ दिलचस्प तथ्यों का पता चलता है। सुधारों के पूर्व भारत का निर्यात प्राथमिक कृषि वस्तुओं, यथा, कपड़े, रत्न और आभूषण, के निर्यात से प्रेरित होता था, जबकि वैश्विक स्तर पर पण्य संरचना प्रौद्योगिकी प्रधान विनिर्मित वस्तुओं, यथा, इंजीनियरी सामान और रसायनों की ओर उन्मुख हो रही थी। इस प्रकार, 1980 के दशक में वृद्धि में गति होने के बावजूद विश्व-निर्यात में भारत के हिस्से में लगभग 0.5 प्रतिशत गिरावट आयी।

6.29 सुधार और अनुकूल व्यापार नीति भारत के पण्य निर्यात की संरचना में बदलाव ले आयी। प्रौद्योगिकी-प्रधान निर्यात, जिनमें फार्मास्युटिकल्स सहित इंजीनियरी सामान, यथा, धातु, मशीनें एवं परिवहन उपकरण और रसायन समाविष्ट हैं, भारत के लिए अग्रणी निर्यात क्षेत्र के रूप में उभर कर आया, जो भारत की जीडीपी वृद्धि में निर्यात की बढ़ती प्रधानता की ओर इंगित करता है (सारणी 6.10)। प्रौद्योगिकी-प्रधान निर्यात की ओर उन्मुख होने के अतिरिक्त पेट्रोलियम

सारणी 6.9 : भारत का व्यापार कार्यसंपादन

अवधि	निर्यात वृद्धि (%)			आयात वृद्धि (%)		
	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4	5	6	7
अप्रैल	31.3	63.0	-32.8	42.1	65.0	-37.2
मई	23.2	50.0	-36.2	40.0	39.2	-32.7
जून	16.1	58.5	-29.8	39.0	44.6	-21.8
जुलाई	18.0	52.1	-25.5	41.0	49.7	-33.2
अगस्त	17.4	40.5	-24.1	32.9	64.6	-35.9
सितंबर	16.4	26.1	-8.4	5.0	70.9	-34.0
अक्तूबर	47.8	-3.7	2.7	24.7	18.5	-2.7
नवंबर	29.4	-13.5	29.6	34.9	6.3	2.7
दिसंबर	35.0	-8.6	19.9	28.3	-3.3	32.2
जनवरी	35.8	-13.6	18.7	58.1	-20.2	34.8
फरवरी	43.1	-21.0	31.8	43.6	-27.6	67.3
मार्च	34.1	-25.1	54.1	37.6	-29.6	67.1
पहली छमाही	**20.4**	**48.4**	**-26.1**	**33.3**	**55.7**	**-32.5**
दूसरी छमाही	**37.5**	**-14.3**	**26.1**	**37.9**	**-9.3**	**33.6**
वार्षिक (अप्रै-मार्च)	**28.9**	**13.7**	**-4.7**	**35.4**	**20.8**	**-8.2**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

सारणी 6.10 : भारत के पण्य निर्यात की संरचना

(प्रतिशत हिस्सा)

	1987-91	1992-96	1997-2003	2004-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7
1. प्राथमिक उत्पाद	24.1	21.8	19.1	16.0	16.9	13.7
(i) कृषि एवं संबद्ध उत्पाद	18.5	17.6	16.1	10.6	11.3	9.5
(ii) अयस्क एवं खनिज	2.1	2.0	1.8	3.5	5.6	4.2
2. विनिर्मित वस्तुएँ	71.0	75.3	76.7	69.9	63.2	66.5
(i) चमड़ा और विनिर्मित वस्तुएँ	7.6	6.3	4.4	2.7	2.2	1.9
(ii) रसायन और संबंधित उत्पाद	8.3	10.7	12.9	14.1	13.0	12.3
(iii) इंजीनियरी वस्तुएँ	11.4	13.4	15.1	21.5	22.9	25.5
धातु की विनिर्मित वस्तुएँ	*2.3*	*2.8*	*3.3*	*4.1*	*4.3*	*4.1*
मशीनरी उपकरण	*3.6*	*2.9*	*3.5*	*4.9*	*5.6*	*5.9*
परिवहन उपकरण	*1.9*	*2.8*	*2.4*	*3.8*	*4.3*	*6.0*
लोहा एवं इस्पात	*0.5*	*1.9*	*2.4*	*3.9*	*3.3*	*3.2*
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ	*1.5*	*1.5*	*2.2*	*2.3*	*2.1*	*3.7*
(iv) टेक्सटाइल और टेक्सटाइल उत्पाद	23.3	26.0	25.1	15.6	11.9	11.8
(v) रत्न एवं आभूषण	18.4	16.7	16.9	14.6	12.1	15.1
(vi) हस्तशिल्प	1.4	1.4	1.6	0.5	0.3	0.2
3. पेट्रोलियम उत्पाद	3.0	1.9	2.4	11.5	17.4	14.5
4. अन्य	1.9	1.0	1.8	2.6	2.5	5.4
कुल निर्यात	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

उत्पादों का निर्यात (जिसने शानदार वृद्धि दर्शायी) कुल निर्यात में प्रमुख योगदान करने वाले के रूप में उभरा, जो दुनिया में भारत के छठे सबसे बड़े रिफाइनरी बनने के प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है।

6.30 तथापि, वर्ष 2008-09 के दौरान विनिर्मित वस्तुओं के मामले में गिरावट मामूली थी। इसके परिणामस्वरूप, कुल निर्यात में तेल से इतर निर्यात और विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात का हिस्सा पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 में लगभग 8 प्रतिशत अंक बढ़ा। सारांशत:, इसका तात्पर्य बढ़ी हुई दक्षता और उत्पादकता के चलते विनिर्मित क्षेत्र में लागत प्रतिस्पर्धात्मकता का होना है। अधिक भिन्न-भिन्न स्तरों पर, प्रमुख पण्य, जिनमें वर्ष 2008-09 के दौरान निर्यात में गिरावट दिखाई पड़ी, थे हस्तशिल्प, पेट्रोलियम उत्पाद, अयस्क और खनिज, तथा कृषि और संबद्ध उत्पाद। तथापि, वैश्विक संकट का अधिक स्पष्ट प्रभाव वर्ष 2008-09 (अप्रैल-जून) के दौरान भारत के निर्यात पर पड़ा। सभी क्षेत्रो में, जिनमें इंजीनियरी, रसायन, रत्न और आभूषण तथा पेट्रोलियम निर्यात शामिल हैं, निर्यात वृद्धि में गिरावट देखी गयी (सारणी 6.11)।

6.31 भारत के निर्यात की क्षेत्रीय दिशा में भी वर्ष 2000 और 2008 के बीच महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई पड़े हैं। पहला, परंपरागत बाजारों, यथा, ईयू और उत्तरी अमेरिका, में भारत के निर्यात का हिस्सा महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुआ। दूसरा, लैटिन अमेरिका, आशियान, पश्चिम एशिया, उत्तरी अफ्रीका और दक्षिण एशिया के पक्ष में एक संरचनात्मक बदलाव दिखाई दिया। वृद्धि के संदर्भ में, विकासशील देशों को भारत का निर्यात, जो वर्ष 2007-08 में 33.6 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 के दौरान सबसे बड़ी गिरावट के साथ (-0.5)प्रतिशत हो जाने के लिए जिम्मेवार था, जिसका मुख्य प्रेरक बिन्दु था चीन को किये गये निर्यात में तेजी से कमी आना। भारत के निर्यात में वृद्धि में दूसरी सबसे बड़ी गिरावट वर्ष 2008-09 के दौरान ओईसीडी देशों को किये गये निर्यात में देखी गयी। वर्ष 2008-09 के दौरान ओईसीडी देशों को किये गये निर्यात में गिरावट की अगुआई अमेरिका द्वारा की गयी; फिर भी, अमेरिका भारत के निर्यात में अकेले ही सबसे बड़ा योगदान करने वाला बना रहा (सारणी 6.12)। उपर्युक्त

सारणी 6.11 : वैश्विक संकट और भारत का निर्यात

पण्य	राशि (बिलियन अमरीकी डालर)			वृद्धि (%)			
	2006-07	2007-08	2008-09	2007-08	2008-09	अप्रैल-अक्तूबर	
						2009-10	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	
1. प्राथमिक उत्पाद	**19.7**	**27.6**	**25.3**	**40.0**	**-8.0**	**-22.7**	**28.5**
(i) कृषि एवं संबद्ध उत्पाद	12.7	18.4	17.5	45.3	-4.9	-25.5	36.8
(ii) अयस्क एवं खनिज	7.0	9.1	7.8	30.2	-14.5	-16.1	12.0
2. विनिर्मित वस्तुएँ	**84.9**	**103.0**	**122.8**	**21.3**	**19.6**	**-20.9**	**39.3**
(i) चमड़ा और विनिर्मित वस्तुएँ	3.0	3.5	3.6	16.1	1.5	-18.2	13.6
(ii) रसायन और संबंधित उत्पाद	17.3	21.2	22.6	22.3	7.1	-15.8	26.6
(iii) इंजीनियरी वस्तुएँ	29.6	37.4	47.3	26.4	26.5	-28.7	51.2
धातु की विनिर्मित वस्तुएँ	5.1	7.1	7.6	38.8	7.0	-33.7	25.3
मशीनरी उपकरण	6.7	9.1	11.0	35.8	19.9	-20.0	37.1
परिवहन उपकरण	4.9	7.0	11.1	41.9	58.8	-12.2	80.9
लोहा एवं इस्पात	5.2	5.4	5.8	4.0	6.9	-60.4	46.6
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ	2.9	3.4	6.8	17.8	102.5	-15.1	134.6
(iv) टेक्सटाइल	17.4	19.4	20.0	11.8	3.0	-10.5	10.3
(v) रत्न एवं आभूषण	16.0	19.7	27.7	23.2	42.1	-19.8	67.0
(vi) हस्तशिल्प	0.4	0.5	0.3	16.0	-40.8	-38.2	-48.3
3. पेट्रोलियम उत्पाद	**18.6**	**28.4**	**26.8**	**52.2**	**-5.4**	**-35.8**	**-48.3**
4. अन्य	**3.2**	**4.0**	**7.7**	**26.4**	**148.9**	**-13.2**	**98.3**
कुल निर्यात	**126.4**	**162.9**	**182.6**	**28.9**	**13.7**	**-23.3**	**39.4**

स्रोत: वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

क्षेत्रों के साथ भारत के निर्यात का बढ़ता हिस्सा उन कारकों, यथा, दूरी और अर्थव्यवस्थाओं के आकार, के चलते हुआ, जिनका वर्णन अंतरराष्ट्रीय व्यापार के ग्रैविटी मॉडल में किया गया है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार के ग्रैविटी मॉडल का अधिकाधिक उपयोग व्यापारिक भागीदारों के बीच व्यापार के प्रत्याशित परिमाण और उनके वास्तविक व्यापार में अपसरण को मापने के लिए किया जाता है (बॉक्स VI.3)।

सारणी 6.12 : भारत के निर्यात का भौगोलिक विविधीकरण

(प्रतिशत हिस्सा)

क्षेत्र/देश	1987-90	1990-95	1995-00	2000-05	2005-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**57.7**	**58.1**	**56.4**	**48.4**	**40.8**	**39.5**	**37.4**
(i) ईयू	24.8	27.1	26.4	22.1	21.4	21.2	21.0
यूके	6.0	6.4	5.9	4.8	4.3	4.1	3.6
जर्मनी	6.4	7.2	5.5	3.9	3.3	3.1	3.5
अन्य ईयू	12.4	13.5	14.9	13.3	13.8	13.9	14.2
(ii) यूएस	17.7	17.4	20.2	19.1	14.0	12.7	11.3
(iii) अन्य ओइसीडी	15.1	13.5	9.9	7.3	5.5	5.6	4.7
2. ओपेक	**6.2**	**8.8**	**10.1**	**13.3**	**17.3**	**16.6**	**21.2**
(i) सऊदी अरब	1.6	1.9	1.9	1.8	2.2	2.3	2.7
(ii) यूएई	2.2	4.2	5.0	6.9	10.1	9.6	13.1
(iii) अन्य ओपेक	2.4	2.7	3.2	4.6	5.0	4.7	5.4
3. पूर्वी यूरोप	**17.5**	**8.3**	**3.6**	**2.6**	**1.3**	**1.1**	**1.1**
4. विकासशील देश	**15.5**	**22.5**	**28.9**	**33.5**	**39.6**	**42.5**	**37.6**
(i) एशिया	13.0	18.7	22.6	26.3	29.9	31.6	28.1
चीन	0.3	0.7	1.5	3.8	6.2	6.6	5.1
हांगकांग	3.4	4.4	5.9	5.2	3.9	3.9	3.6
अन्य एशियाई देश	9.4	13.6	15.2	17.3	19.8	21.1	19.4
(ii) अफ्रीका	2.0	2.8	4.6	4.9	6.6	7.5	6.3
(iii) लैटिन अमेरिका	0.5	1.0	1.7	2.3	3.2	3.4	3.1
5. अन्य	**3.1**	**2.3**	**0.9**	**2.2**	**0.9**	**0.4**	**2.7**
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

बॉक्स VI.3
विदेश व्यापार का ग्रैविटी मॉडल

इस मॉडल में, जिसे न्यूटन के भौतिकी के सिद्धांत से लिया गया है, एकल समीकरण शामिल होता है, जिसमें यह मान लिया जाता है कि दो देशों के बीच व्यापार का परिमाण सकारात्मक रूप से दो व्यापारिक अर्थव्यवस्थाओं के संयुक्त आकार पर निर्भर करता है, और इसका नकारात्मक संबंध दोनों के बीच की दूरी से होता है। कालक्रम में, व्यापार के ग्रैविटी मॉडल को विस्तारित करके उसमें अनेक अन्य कारकों को सम्मिलित किया गया है। इस दृष्टिकोण का फायदा यह होता है कि इसमें किसी देश की नीति और संस्थागत वातावरण, जिसमें अनेक कृत्रिम अड़चनें शामिल हैं, न कि केवल व्यापारिक नीति, के समग्र प्रभाव का प्रग्रहण किया जाता है। किसी देश को 'अंडर-ट्रेड' करता पाया जाता है, यदि व्यापारिक भागीदारों के बीच इसका वास्तविक व्यापार, औसतन, बिना किसी स्पष्ट वैरिएबल के ग्रैविटी मॉडल द्वारा पूर्वानुमेय स्तर से कम हो (आईएमएफ, 2002; रोसे 2002)। ग्रैविटी मॉडल के अनुसार विकासशील देशों के व्यापार पैटर्न का विश्लेषण करने से निम्नलिखित का पता चलता है : (i) भुगतान संतुलन और व्यापार प्रतिबंध विकासशील देशों के लिए महत्त्वपूर्ण कारण बने रहते हैं, जिनके चलते वे औद्योगिक देशों की तुलना में कम व्यापार करते हैं; और (ii) अंतरराष्ट्रीय उदग्र विशेषज्ञता, जिसने पूर्वी एशिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी, उन विकासशील देशों के लिए, जिनके पास खुली व्यापार प्रणाली, प्रचुर श्रमिक और नमनीय अर्थव्यवस्था होती है, अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकती है। सभी देशों में व्यापार एवं भुगतान संतुलन नीतियों, दोनों में पूर्ण उदारीकरण होने से औद्योगिक देशों (उत्तर उत्तर व्यापार) के बीच व्यापार लगभग 40 प्रतिशत, उत्तर-दक्षिण व्यापार लगभग 63 प्रतिशत और विकासशील देशों (दक्षिण-दक्षिण व्यापार) के बीच व्यापार लगभग 94 प्रतिशत तक बढ़ जायेगा (आईएमएफ, 2002)।

6.32 यह मूल्यांकन करने के लिए कि किस प्रकार विकसित देशों की तुलना में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को भारत के निर्यात की दिशा का निर्धारण आपेक्षिक मूल्य प्रतिस्पर्धात्मकता प्रभाव और वास्तविक मांग स्थिति द्वारा किया गया, एक अनुभवमूलक विश्लेषण किया जाता है। आपेक्षिक मूल्य के संबंध में भारत के निर्यात की दिशा की दीर्घावधि लोच सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण और 1.88 पर धनात्मक थी, जो आपेक्षिक मांग-स्थिति के संबंध में लगभग एकात्मक लोच गुणांक से अधिक थी[6]। तथापि, मॉडल में वर्ष 1991-92 से महत्त्वपूर्ण संरचनात्मक बदलाव ने आपेक्षिक मूल्य प्रभाव को संयत करने और आपेक्षिक वास्तविक मांग प्रभाव को सुधारने की अगुआई की। मूल्य लोच गुणांक घट कर 0.49 हो गया, जबकि वास्तविक मांग प्रभाव में सुधार होकर वह 1.44 प्रतिशत हो गया (सारणी 6.13)। अक्तूबर 2008 से भारत के निर्यात में संकुचन मुख्यत: वास्तविक मांग प्रभाव से अनुकूलित था, जो वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक कार्यकलापों में तीव्र गिरावट से उद्भूत हुआ था।

पण्यवार और फर्मवार प्रमुख निर्यात

6.33 सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान इंजीनियरी सामान के निर्यात ने भारत के वणिक माल निर्यात में महत्त्वपूर्ण अनुपात ग्रहण कर लिया है (बॉक्स VI.4)। वैश्विक संकट के दौरान इंजीनियरी और रासायनिक वस्तुओं के निर्यात की महत्त्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट दिखाई दी। इंजीनियरी सामान के निर्यात ने वर्ष 2008-09 के दौरान अपनी वृद्धि की गति बनाये रखी, जिसके साथ परिवहन उपकरण के निर्यात में वृद्धि महत्त्वपूर्ण

सारणी 6.13 : भारत के निर्यात की व्यापक दिशा पर आपेक्षिक कीमत एवं वास्तविक मांग का प्रभाव
(दीर्घावधि सह-एकीकरण गुणांक)

आश्रित वैरिएबल्स : निर्यात की दिशा	व्याख्यात्मक वैरिएबल्स			
	इंटरसेप्ट	आपेक्षिक कीमत	वास्तविक मांग	संरचनात्मक बदलाव
1	2	3	4	5
1. x_{em}/x_{ac}	0.66	1.88 (7.25)	1.01 (6.45)	
2. x_{em}/x_{ac}	1.18	0.49 (1.02)	1.44 (6.95)	0.05 (2.07)
3. x_{em}/x_{w}	0.42	2.17 (12.28)	1.00 (7.82)	
4. x_{em}/x_{w}	0.81	1.66 (7.25)	1.26 (6.82)	0.03 (1.73)
5. x_{ac}/x_{w}	-0.38	10.83 (8.00)	0.47 (1.36)	
6. x_{ac}/x_{w}	0.016	3.26 (1.97)	1.87 (5.37)	0.03 (2.83)

X_{em} : उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) को भारत का निर्यात, अमरीकी डालर में।
X_{ac} : उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को भारत का निर्यात, अमरीकी डालर में।
X_{w} : विश्व को भारत का कुल निर्यात, अमरीकी डालर में।
Pem : ईएमई का आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य) ।
Pac : उन्नत अर्थव्यवस्थाओं आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य)।
P_{w} : विश्व का आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य)।
Q_{em} : ईएमई की वास्तविक मांग स्थिति, अर्थात्, ईएमई का कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया।
Q_{ac} : उन्नत देशों की वास्तविक मांग-स्थिति, अर्थात्, उनका कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया।
Q_{w} : विश्व की वास्तविक मांग-स्थिति, अर्थात्, उनका कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया ।
आपेक्षिक मूल्य : P_{em}/P_{ac} समीकरण 1 और 2 में प्रयुक्त, P_{em}/P_{w} समीकरण 3 और 4 में प्रयुक्त, P_{ac}/P_{w} समीकरण 5 और 6 में प्रयुक्त।
आपेक्षिक मांग : Q_{em}/Q_{ac} समीकरण 1 और 2 में प्रयुक्त, Q_{em}/Q_{w} समीकरण 3 और 4 में प्रयुक्त, Q_{ac}/Q_{w} समीकरण 5 और 6 में प्रयुक्त।
कोष्ठक में दिये गये आँकड़े टी-स्टैटिस्टिक्स हैं।

[6] अनुमान सह-एकीकरण मॉडल पर आधारित है, जिसमें अप्रैल 1980 से जुलाई 2009 तक की अवधि के लिए इन वैरिएबलों का नैसर्गिक लोगैरिद्म शामिल है।

बॉक्स VI.4
भारत के इंजीनियरी सामान का निर्यात

सुधार की अवधि के दौरान भारत के वणिक माल निर्यात में पण्य संरचना के संदर्भ में उल्लेखनीय बदलाव दिखाई दिया, जिसकी अगुआई इंजीनियरी सामान ने की। ऐसे वातावरण में, जहाँ अर्थव्यवस्था में बढ़ता खुलापन है और 1990 के दशक के प्रारंभ से समर्थक नीतिगत ढाँचा बना हुआ है, इंजीनियरी सामान का निर्यात वर्ष 1987-88 में 1.2 बिलियन अमरीकी डालर (कुल वणिक माल निर्यात का 9.5 प्रतिशत) से बढ़ कर वर्ष 2008-09 में 47.3 बिलियन अमरीकी डालर (कुल वणिक माल निर्यात का 25.5 प्रतिशत) हो गया। वर्ष 2001-02 से 2008-09 तक की अवधि के दौरान 27.7 प्रतिशत की अभिप्रेत वृद्धि दर पर इंजीनियरी सामान के निर्यात में तेज वृद्धि का कारण बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मकता और भारत के विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में बढ़ते प्रौद्योगिकी परिष्करण को माना जा सकता है। वर्ष 2004-05 में इंजीनियरी सामान विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात की सबसे बड़ी मद के रूप में उभर कर सामने आया, जिसने कपड़ों तथा रत्न एवं आभूषणों को पीछे छोड़ दिया। इंजीनियरी सामान के भीतर परिवहन उपकरण निर्यात वृद्धि के प्रमुख चालक बन कर उभरे, जिसका कारण भारत के ऑटोमोटिव उद्योग के बढ़ते वैश्विक प्रतिस्पर्धी फायदे को माना जा सकता है। ऑटोमोबाइल कंपोनेंट्स मैन्युफैक्चरिडग एसोसिएशन ऑफ इंडिया (एसीएमए) के अनुसार भारतीय ऑटो कंपोनेंट उद्योग का विशेष लक्षण यह है कि यह दुनिया में तिपहिया वाहनों का सबसे बड़ा बाजार है, दुपहिया वाहनों का दूसरा सबसे बड़ा बाजार, चौथा सबसे बड़ा ट्रैक्टर बाजार और पाँचवाँ सबसे बड़ा वाणिज्यिक वाहन बाजार है तथा एशिया का चौथा सबसे बड़ा यात्री वाहन बाजार है। 1990 के दशक के मध्य से भारत के ऑटोमोटिव उद्योग ने न्यून परिमाण और विखंडित क्षेत्र से एक अत्यधिक प्रतिस्पर्धी क्षेत्र में द्रुत रूपांतरण देखा है, जिसकी विशेषता यह है कि इसमें विश्व-श्रेणी की प्रौद्योगिकी, बड़े और आश्वस्त कार्य-परिणाम तथा वैश्विक वाहन विनिर्माताओं से मांग की अनुक्रिया में सटीक समय-सारणी है। अनेक भारतीय कंपनियों ने ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स के विश्व-नेताओं के साथ प्रौद्योगिकी सहयोग और इक्विटी भागीदारी के क्षेत्र में प्रवेश किया है। कुछ वैश्विक वाहन निर्माताओं ने भारत में न्यून श्रमिक लागत और उच्च कुशलताप्राप्त कार्यबल की उपलब्धता को ध्यान में रख कर कंपोनेंट्स विनिर्माण सुविधाओं के लिए अनुषंगी इकाइयाँ स्थापित की हैं। इसके अतिरिक्त, भारत का ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स उद्योग अत्यधिक विविधीकृत है, जिसकी क्षमता भिन्न-भिन्न प्रकार के 150 उत्पादों को तैयार करने की है। हाल में इंजीनियरी सामान के निर्यात में उछाल होने पर भी पूर्वी एशिया और लैटिन अमेरिका की उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत के निर्यात की प्रौद्योगिकी प्रबलता में पर्याप्त वृद्धि कर पाने की संभावना है। ऑटोमोटिव उद्योग की वैश्विक स्थिति के संदर्भ में वैश्विक ऑटोमोटिव बाजार में भारत के निर्यात का हिस्सा कम है (सारणी)। वर्ष 2001-07 के दौरान भारत से मशीनों और परिवहन उपकरणों के निर्यात में 33.0 प्रतिशत की अभिप्रेत वृद्धि दर दर्ज की गयी, जबकि तुलनात्मक रूप से इस क्षेत्र की वैश्विक अभिप्रेत वृद्धि दर इस अवधि में 12.1 प्रतिशत पर थी। इस प्रकार, विश्व-स्तर पर भारत का मशीनरी तथा परिवहन उपकरणों और ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स का निर्यात, जो वर्ष 2000 में 0.10 प्रतिशत था, वह वर्ष 2007 तक बढ़ कर 0.33 प्रतिशत हो गया। एसीएमए के अनुसार, ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स उद्योग को गुणवत्ता में सुधार के लिए तथा विश्व-बाजार में अपनी प्रतिस्पर्धी स्थिति बनाये रखने के लिए अधिक उपाय करने होंगे।

सारणी : उभरती अर्थव्यवस्थाओं का ऑटोमोटिव उत्पादों का निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

देश	मशीनरी	ऑटोमोबाइल
विश्व	5,348	1,234
ब्राजील	42	15
चीन	674	29
भारत*	25	5
कोरिया	234	49
मेक्सिको	154	46
रूस	17	4
दक्षिण अफ्रीका	16	8
थाईलैंड	74	16
तुर्की	39	18

स्रोत : विश्व व्यापार संगठन

रूप से तेज हुई। रसायनों के निर्यात में भी समुत्थान वर्ष 2008-09 के दौरान बना रहा, अलबत्ता, इसकी वृद्धि थोड़ी संयत रही। इन दो क्षेत्रों में वर्ष 2008-09 में निर्यात का विस्तार वर्ष 2008-09 में भारत के कुल निर्यात के समग्र विस्तार के लिए जिम्मेवार था। वर्ष 2009-10 (अप्रैल-अक्तूबर) में, इंजीनियरी वस्तुओं के निर्यात में गिरावट विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में गिरावट का लगभग आधा और भारत के कुल निर्यात के एक तिहाई के लिए जिम्मेवार थी।

6.34 विनिर्माण क्षेत्र के भीतर इंजीनियरी सामान, रसायनों और कपड़ा उद्योगों का महत्त्व उनके प्रधान आर्थिक लक्षणों से स्पष्ट है। वार्षिक उद्योग सर्वेक्षण 2007-08 के अनुसार, इंजीनियरी सामान क्षेत्र विनिर्माण क्षेत्र के सकल निवेश, उत्पादन, मूल्य योजित और रोजगार के लगभग एक तिहाई हिस्से के लिए जिम्मेवार था। इंजीनियरी सामान, रसायन और कपड़ा उद्योग एक साथ मिल कर विनिर्माण क्षेत्र के निवेश, उत्पादन, मूल्य योजित और रोजगार के 50 प्रतिशत से अधिक के लिए जिम्मेवार थे (सारणी 6.14)। अत, इंजीनियरी सामान भारत में विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण अनुपात ग्रहण करते हैं और इंजीनियरी सामान निर्यात के कार्यसंपादन द्वारा प्रदर्शित आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति ने भारतीय उद्योग को कुछ हद तक संकट के दौरान घटी हुई बाह्य मांग से उद्भूत आघातों से अप्रभावित रखा।

सारणी 6.14 : प्रमुख निर्यात उद्योंगों के प्रधान लक्षण

(कुल में प्रतिशत)

संकेतक	इंजीनियरिंग	रसायन	टेक्सटाइल्स	कुल
1	2	3	4	5
(i) कारखानों की संख्या	25.2	7.6	11.3	44.1
(ii) स्थिर पूँजी	34.4	14.7	10.4	59.5
(iii) उत्पादक पूँजी	34.9	15.1	9.6	59.6
(iv) निवेश की गयी पूँजी	35.2	13.6	9.8	58.5
(v) कामगार	26.8	7.5	21.6	55.8
(vi) कुल व्यक्ति (vii) नियोजित	27.8	8.5	20.0	56.3
(viii) कामगारों को मजदूरी	38.2	9.2	17.4	64.9
(ix) कुल परिलब्धियाँ	40.3	12.2	13.4	65.9
(x) कुल निविष्टि	34.5	10.3	7.3	52.0
(xi) कुल उत्पादन	35.3	10.9	7.2	53.4
(xii) मूल्यह्रास	34.1	15.8	11.2	61.1
(xiii) निवल मूल्य योजित	39.5	12.8	6.3	58.6
(xiv) अदा किया गया किराया	35.0	10.7	10.6	56.3
(xv) अदा किया गया ब्याज	33.2	13.2	13.0	59.4

स्रोत : वार्षिक उद्योग सर्वेक्षण, 2007-08

6.35 भारत की वृद्धि में व्यापार सरणी की भूमिका को और अधिक अभिनिश्चित करने के लिए फर्म-स्तरीय निर्यातोन्मुख सूचना का परीक्षण किया गया। फर्म-स्तरीय निर्यात-उन्मुखता भी भारत के विनिर्माण-क्षेत्र की वृद्धि में व्यापार सरणी के बढ़ते महत्त्व का प्रदर्शन करती है। सीएमआईई डाटाबेस से ली गयी 1500 कंपनियों के विश्लेषण ने यह दर्शाया कि 20 प्रतिशत या उससे अधिक निर्यात-बिक्री अनुपात वाली कंपनियों की संख्या वर्ष 1993-94 और 2007-08 के बीच दुगुनी से अधिक हो गयी (सारणी 6.15)। इस अवधि में विनिर्मित उत्पादों के निर्यात में उनका हिस्सा भी काफी बढ़ा। फर्म-स्तरीय निर्यात-उन्मुखता की यह प्रवृत्ति भारतीय कंपनियों के बढ़ते अंतरराष्ट्रीयकरण का नतीजा थी। बढ़ी हुई निर्यात-उन्मुखता की पृष्ठभूमि में वैश्विक आघात विनिर्माण क्षेत्र की फर्मों में वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से उनके उत्पादों के लिए घटी हुई बाह्य मांग के माध्यम से फैल गये।

आयातों के माध्यम से प्रभाव

6.36 वणिक माल आयात में भी वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में वैश्विक मंदी का असर दिखाई पड़ा, जिसने निर्यात में संकुचन के प्रतिकूल प्रभाव का कुछ हद तक समंजन किया। वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान भारत की आयात-वृद्धि में भी अवपात हुआ और यह बाद में वर्ष 2008-09 की अंतिम तिमाही से लेकर वर्ष 2009-10 (अप्रैल-अक्तूबर) तक संकुचित हुआ। कच्चे तेल, पूँजीगत वस्तुओं और सोना एवं याँदी के मामले में आयात के दुर्बल पड़ने को देखा गया (सारणी 6.16)।

6.37 पिछले दशक के दौरान आयात में व्यापक समूहन के भीतर अनेक सूक्ष्म बदलाव हुए हैं, जिन्हें पहचाना जाना होगा। उदाहरण के लिए, पेट्रोलियम आयात के भीतर पेट्रोलियम उत्पादों से कच्चे तेल की ओर बदलाव हुआ है, जो देश के भीतर रिफाइनरी क्षमता में बड़े पैमाने पर वृद्धि होने के बाद हुआ है। पुनः, वर्ष 2001-02 से भारत ने स्वयं को पेट्रोलियम उत्पादों के निवल आयातकर्ता से उनके निवल निर्यातक के रूप में बदल दिया है। 1990 के दशक के दौरान एक अन्य महत्त्वपूर्ण गतिविधि में स्वर्ण-आयात को आधिकारिक सरणी के

सारणी 6.15 : फर्म-स्तरीय निर्यात उन्मुखता

वर्गीकरण	1993-94	1998-99	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08
1	2	3	4	5	6	7	8	9
निर्यात-विक्रय अनुपात (प्रतिशत)				**कंपनियों की संख्या का वितरण**				
>=75	56	71	77	75	81	61	76	71
>=50	75	126	158	160	168	159	169	179
>=35	94	175	219	242	241	249	272	261
>=20	145	269	346	357	382	388	409	417
>=10	249	398	499	533	542	555	566	566
निर्यात-विक्रय अनुपात (प्रतिशत)				**कुल निर्यात में विनिर्माण क्षेत्र का प्रतिशत**				
>=75	12.5	15.0	13.0	12.6	11.5	10.2	10.4	13.1
>=50	15.6	24.4	28.1	26.9	24.7	24.6	22.5	51.6
>=35	23.2	34.0	36.5	40.8	38.2	42.0	68.8	61.1
>=20	34.3	50.6	68.0	68.2	74.4	73.3	76.0	77.8
>=10	62.1	70.6	84.4	82.8	85.5	84.2	83.1	83.7

स्रोत : 1,497 कंपनियों के लिए प्रॉवेस डाटा, सीएमआईई

सारणी 6.16 : वैश्विक संकट और भारत का आयात

पण्य/समूह	बिलियन अमरीकी डालर			वृद्धि (%)			
	2006-07	2007-08	2008-09	2007-08	2008-09	अप्रैल-अक्तूबर	
						2009-10	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. थोक आयात	**84.2**	**112.7**	**135.7**	**33.8**	**20.3**	**-35.6**	**70.6**
(i) पेट्रोलियम एवं पेट्रोलियम उत्पाद	56.9	79.6	91.3	39.9	14.6	-35.0	71.6
(ii) थोक उपभोग वाली वस्तुएँ	4.3	4.6	4.9	7.1	6.2	68.0	3.8
खाद्य तेल	2.1	2.6	3.4	21.4	34.4	54.9	12.6
(iii) अन्य थोक मदें	23.0	28.5	39.5	23.9	38.6	-46.2	78.5
उर्वरक	3.1	5.4	13.6	71.9	151.2	-60.4	245.0
लोहा और इस्पात	6.4	8.7	9.4	35.2	7.8	-26.8	19.4
2. गैर-थोक आयात	**101.5**	**138.7**	**155.8**	**36.6**	**12.3**	**-22.7**	**33.7**
(i) पूँजीगत वस्तुएँ	47.1	70.1	70.5	49.0	0.6	-24.1	46.2
विद्युत एवं इलेक्ट्रॉनिक्स से इतर मशीने	13.9	19.9	20.9	43.4	5.3	-21.9	37.5
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ एवं कंप्यूटर सॉफ्टवेयर	16.9	21.1	24.4	24.6	15.7	-12.5	22.4
परिवहन उपकरण	9.4	20.1	13.0	113.1	-35.2	-56.7	133.4
(ii) मुख्यत: निर्यात-संबद्ध मदें	17.9	20.8	29.7	16.2	43.1	-31.1	75.6
मोती, मूल्यवान एवं कम मूल्यवान पत्थर	7.5	8.0	14.4	6.5	81.1	-39.1	112.1
रसायन, जैविक और अजैव	7.8	9.9	12.2	26.4	22.8	-25.0	56.1
(iii) अन्य	36.6	47.8	55.5	30.8	16.1	-16.4	8.8
सोना और चाँदी	14.6	17.9	18.7	22.0	4.6	-16.3	31.8
कुल आयात	**185.7**	**251.4**	**291.5**	**35.4**	**15.9**	**-29.0**	**49.5**
ज्ञापन मद							
गैर-तेल आयात	128.8	171.8	200.2	33.4	16.5	-25.9	40.3
सोना और चाँदी को छोड़ कर गैर तेल आयात	114.1	153.9	181.5	34.9	17.9	-27.2	41.6

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

माध्यम से अनुमति दी गयी है (सारणी 6.17)। वर्ष 1997 से जब बैंकों को सोने का आयात करने की अनुमति दी गयी, तब से यात्री बैगेज के माध्यम से सोने का आयात किये जाने में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आयी है। जिन उद्योगों ने 1990 के दशक से आयात करने की

सारणी 6.17 : भारत के आयात की पण्य संरचना

(प्रतिशत हिस्सा)

पण्य	1987-91	1992-96	1997-2003	2004-08	2006-07	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
I. थोक आयात	**38.3**	**40.9**	**37.4**	**40.3**	**45.5**	**44.8**	**47.8**
पेट्रोलियम, कच्चा तेल एवं उत्पाद	18.6	23.9	23.7	28.4	30.8	31.6	32.9
थोक उपभोग वाली वस्तुएँ	3.7	2.7	4.2	3.0	2.3	1.8	1.6
खाद्य तेल	1.7	1.0	3.0	2.2	1.1	1.0	1.2
अन्य थोक मदें	15.9	14.3	9.5	9.0	12.4	11.3	13.2
उर्वरक	3.6	3.7	2.2	1.3	1.7	2.1	4.9
II. गैर-थोक आयात	**53.1**	**59.1**	**62.6**	**59.7**	**54.5**	**55.1**	**52.2**
पूँजीगत वस्तुएँ	22.9	25.5	20.5	23.7	25.3	28.1	21.3
निर्यात संबद्ध मदें	16.0	16.6	16.8	14.1	9.6	8.3	9.9
मोती, बहुमूल्य और कम बहुमूल्य पत्थर	9.5	8.3	9.3	7.5	4.0	3.2	4.7
जैविक एवं अजैव रसायन	5.4	6.7	5.9	4.8	4.2	3.9	4.2
अन्य	14.2	17.0	25.4	21.9	19.6	18.7	21.0
सोना और चाँदी			9.4	8.2	7.9	7.1	6.6
III. कुल आयात/सभी पण्य	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
गैर-तेल आयात	81.4	76.1	76.3	71.6	69.2	68.4	67.1
औद्योगिक निविष्टियाँ	73.5	67.3	59.2	58.0	56.3	56.4	53.1

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

सारणी 6.18 : भारत के आयात का भौगोलिक विविधीकरण

(कुल में प्रतिशत हिस्सा)

क्षेत्र/देश	1987-90	1990-95	1995-00	2000-05	2005-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**60.3**	**55.0**	**49.6**	**38.3**	**34.3**	**35.4**	**31.8**
(i) ईयू	**32.8**	**28.7**	**25.7**	**19.4**	**15.6**	**15.3**	**14.3**
यूके	8.4	6.3	5.6	4.6	2.2	2.0	2.0
जर्मनी	8.8	7.8	6.1	3.7	4.0	3.9	4.0
अन्य ईयू	15.7	14.6	13.9	11.1	9.4	9.4	8.3
(ii) ईयु	10.8	10.8	8.9	6.4	6.8	8.4	6.2
(iii) अन्य ओइसीडी	16.6	15.5	15.0	12.5	11.9	11.8	11.3
2. ओपेक	**13.6**	**20.3**	**22.7**	**6.6**	**25.3**	**30.7**	**32.6**
(i) सऊदी अरब	4.7	6.6	5.8	1.0	5.7	7.7	6.7
(ii) यूएई	3.5	5.1	4.4	2.3	5.0	5.4	7.1
(iii) अन्य ओपेक	5.4	8.5	12.5	3.3	14.6	17.7	18.8
3. पूर्वी युरोप	**8.3**	**4.3**	**2.8**	**1.9**	**2.1**	**1.5**	**2.3**
4. विकासशील देश	**17.8**	**20.5**	**24.8**	**24.9**	**30.4**	**31.5**	**32.9**
(i) एशिया	12.7	15.3	18.4	18.8	24.5	25.5	26.6
चीन	0.5	1.0	2.4	4.6	9.6	10.8	10.8
हांगकांग	0.6	0.8	1.1	1.6	1.5	1.1	2.2
अन्य एशियाई देश	11.6	13.6	14.9	12.6	13.4	13.7	13.7
(ii) अफ्रीका	3.0	3.3	4.8	4.4	3.7	3.7	4.3
(iii) लैटिन अमेरिका	2.1	1.9	1.6	1.7	2.2	2.3	2.0
5. अन्य	**0.0**	**0.0**	**0.0**	**28.2**	**7.9**	**0.8**	**0.5**
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

ओर सबसे कम झुकाव दर्शाया और, जिसके चलते उन्हें धीरे-धीरे आयातित वस्तु समूह में से निकाल दिया गया, वे मुख्यत: ऐसे उद्योग हैं, जिनके पास मध्यम से न्यून दर्जे की प्रौद्योगिकी है और वे श्रम-प्रधान क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इसी प्रकार, पिछले दशक में जिन उद्योगों की आयात-वृद्धि दर सबसे अधिक थी, वे अधिकतर ऐसे उद्योग हैं, जिनके पास मध्यम से उच्च दर्जे की प्रौद्योगिकी है और जिन्होंने निर्यात के लिए आवश्यक मध्यवर्ती उत्पादों को तैयार किया है।

6.38 भारतीय अर्थव्यवस्था को खोले जाने के बाद से अनेक देशों से आयात किये जाने में बढ़ोतरी हुई है। परंपरागत प्रमुख व्यापारिक भागीदार, यथा, जर्मनी, जापान, यूके, और अमेरिका के बाजार हिस्से में कमी आयी है और पूर्वी एशिया (विशेष रूप से चीन) से नये आयात भागीदार उभर कर आये हैं (सारणी 6.18)। एक अन्य गतिविधि हुई है भारत के आयात के प्रमुख स्रोत के रूप में पूर्वी यूरोप के देशों का धीरे-धीरे छितरा जाना। हाल की अवधि में ओपेक देशों का उच्च हिस्सा भारतीय अर्थव्यवस्था में तेल की बढ़ती खपत के चलते कच्चे तेल के आयात के परिमाण में बढ़ोतरी और तेल की उच्च कीमत को प्रतिबिंबित करता है। अंत में, हाल के वर्षों में चीन से किये गये आयात में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई है, जो 1990 के दशक के आरंभ में बहुत थोड़ा होता था।

6.39 आयात, विशेष रूप से पूँजीगत वस्तुओं के आयातों, को अक्सर औद्योगिक कार्यकलाप और निकट भविष्य में निवेश-प्रवृत्ति का संकेतक माना जाता है। (चार्ट VI.5)। आयात का काफी बड़ा हिस्सा औद्योगिक उत्पादन की निविष्टियों के रूप में होता है। तथापि, आयातों और औद्योगिक उत्पादन के बीच एक निश्चित संबंध बता पाना कठिन हो सकता है, क्योंकि आयातित वस्तुएँ या तो देशी उद्योग के लिए पूरक या प्रतिस्थानी हो सकती हैं। इसके परिणामस्वरूप इन संबंधों का अनुभवमूलक परीक्षण अधिकतर देश-विशिष्ट बना रहता है। तथापि, भारत के मामले में अब तक तेल से इतर आयात पूँजीगत वस्तुओं, कच्चे माल और मध्यवर्ती वस्तुओं के रूप में अधिकतर होते रहे हैं, जो औद्योगिक उत्पादन के पूरक होते हैं।

6.40 भारत में उत्पादन के आयात लोच के विश्लेषण से पता चलता है कि जीडीपी के संदर्भ में आयात 1980 के दशक की तुलना में 1990 के दशक में द्रुत गति से बढ़े हैं, जो बाह्य व्यापार के उदारीकरण

चार्ट VI.5 : आयात और औद्योगिक कार्यकलाप

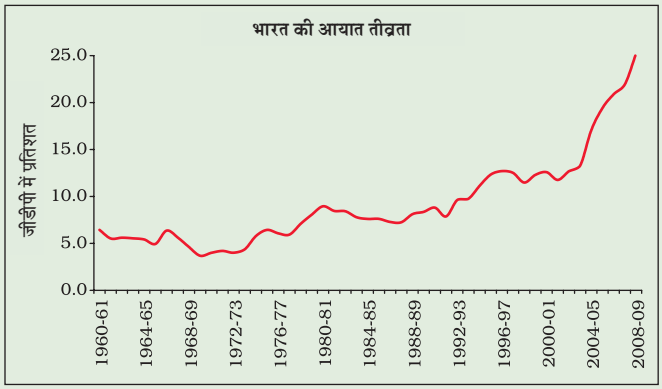

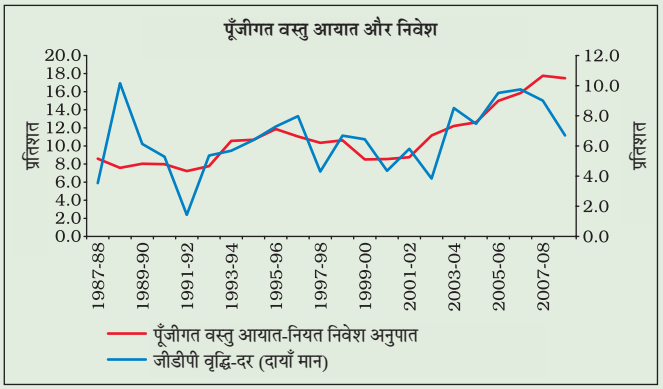

के साथ संगति रखता है। उत्पादक क्षेत्र के लिए आयात का बड़ा महत्त्व फर्म स्तरीय साक्ष्य से स्पष्ट था। सीएमआईई डाटाबेस के अनुसार शीर्ष 100 आयातकर्ता कंपनियाँ 1990 के दशक के अंत में विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात के लगभग आधे हिस्से के लिए जिम्मेवार थीं। 2008 तक ये कंपनिया विनिर्मित वस्तुओं के 80 प्रतिशत की जिम्मेवार थीं। इन फर्मों की आयात-तीव्रता, विक्रय के प्रतिशत के रूप में, वर्ष 1999 से लेकर 2008 की अवधि के दौरान लगभग दुगुनी हो गयी (सारणी 6.19)।

पण्य-कीमत सरणी के माध्यम से प्रभाव

6.41 व्यापार सरणी के माध्यम से प्रभाव के संचरण का अन्य घटक है वैश्विक पण्य-कीमतें, जो अन्य बातों के साथ-साथ, आयातों को और उत्पादन-लागत को प्रभावित करता है। हाल के संकट के आरंभ होने के पूर्व वस्तुओं, यथा, कच्चा तेल और प्राथमिक वस्तुएँ, का वैश्विक मूल्य बढ़ती मांग और आपूर्ति-पक्ष बाध्यताओं के चलते महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया था और इसने पूरी दुनिया में आयातकर्ता देशों के भुगतान संतुलन को विकृत कर दिया था। भारतीय समूह में कच्चे तेल का मूल्य जुलाई 2008 में प्रति बैरल 147 अमरीकी डालर हो गया था। वैश्विक पण्य-कीमतों में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी, विशेष कर कच्चे तेल के मूल्य में, ने स्फीतिकारक दबाव उत्पन्न किया। तथापि, वैश्विक संकट ने पूरी दुनिया में इन वस्तुओं की मांग को तेजी से घटा दिया और उनके मूल्य तेजी से गिरे, जिसके चलते वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में स्फीतिकारक दबाव कम हुआ।

6.42 कीमतों में परिवर्तन का आयात-मूल्य पर प्रभाव आयात के मूल्य-लोच तथा व्यापार के खुलापन की हद पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, यदि वणिक माल आयात अत्यधिक मूल्य-लोच वाले हैं और व्यापार में उचित खुलापन है, तब वैश्विक पण्य-कीमतों में गिरावट के चलते आयात में बढ़ोतरी हो सकती है। तथापि, वैश्विक पण्य-कीमतों का उत्पादन लागत पर प्रभाव असंदिग्ध रूप से होता है। भारत में तेल का आयात, जो कुल आयात का एक बड़ा हिस्सा होता

सारणी 6.19 : उत्पादन की आयात तीव्रता : फर्म-स्तरीय साक्ष्य

(प्रतिशत)

	1999	2003	2004	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8
कंपनियाँ			उद्योग (विनिर्माण) में हिस्सा कुल निर्यात				
शीर्ष 50	32.4	54.1	56.0	60.6	65.3	70.0	70.8
शीर्ष 100	46.2	65.9	67.7	72.2	76.0	78.9	80.0
शीर्ष 200	62.0	76.7	78.3	82.0	85.6	87.5	88.8
शीर्ष 300	70.2	83.4	85.3	88.0	90.7	92.2	93.3
शीर्ष 500	81.8	91.1	91.7	93.5	95.1	96.5	97.4
कुल	100	100	100	100	100	100	100
			उद्योग (विनिर्माण) में हिस्सा कुल आयात				
शीर्ष 50	57.2	76.0	74.7	74.3	76.6	76.7	77.2
शीर्ष 100	63.2	80.4	79.2	79.0	81.0	81.0	81.4
शीर्ष 200	68.7	83.7	82.8	82.8	84.0	84.3	84.7
शीर्ष 300	71.7	85.7	84.9	85.0	86.0	86.4	86.9
शीर्ष 500	78.3	89.0	88.8	88.6	89.4	89.9	90.7
कुल	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
			आयात तीव्रता (विक्रय के प्रतिशत के रूप में आयात)				
शीर्ष 50	19.0	27.6	27.3	31.0	37.8	36.3	39.2
शीर्ष 100	18.3	26.1	25.9	29.3	35.7	34.3	36.9
शीर्ष 200	17.5	24.4	24.2	27.4	33.2	32.1	34.5
शीर्ष 300	16.9	23.6	23.4	26.6	32.3	31.3	33.5
शीर्ष 500	16.3	22.4	22.4	25.5	31.1	30.1	32.1
कुल	**15.6**	**20.3**	**20.6**	**23.6**	**28.6**	**27.7**	**29.4**

स्रोत : प्रॉवेस डाटा, सीएमआईई

चार्ट VI.6 : भारत का पण्य आयात और वैश्विक कीमतें

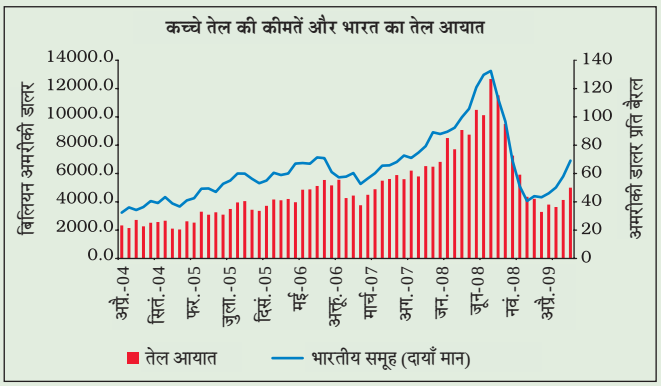

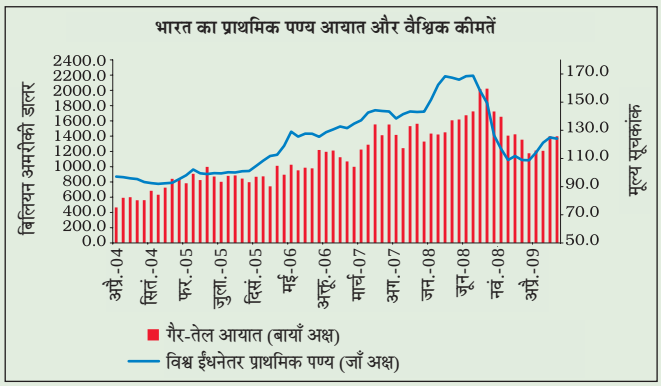

है, वास्तविक कार्यकलापों के लिए एक महत्त्वपूर्ण निविष्टि होता है। भारत में तेल आयात अपेक्षाकृत मूल्य लोचहीन स्थिति का होता है और, इसीलिए, वह उनके मूल्य से अत्यधिक सहसंबद्ध होता है। तदनुसार, भारत में तेल आयात वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में तेजी से कम हो गये, जो कच्चे तेल के मूल्य में गिरावट को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट VI.6)।

6.43 पण्य-कीमत चक्र ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में व्यवसाय-चक्र को अनुकूलित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। हाल का वैश्विक पण्य-मूल्य चक्र, जो वर्ष 2002 में बढ़ने लगा, वर्ष 2008 के मध्य में एक दूसरी ऊँचाई पर पहुँच गया, जिसका संबद्ध निहितार्थ सभी देशों में आस्ति-कीमतों, निवेश, व्यापार संतुलन और वृद्धि के साथ था (चार्ट VI.7)। आईएमएफ और विश्व बैंक के पण्य-मूल्य सूचकांक आँकड़ों के अनुसार सभी पण्य मूल्य सूचकांकों में वर्ष 2003-07 के दौरान औसतन 18.4 प्रतिशत की वृद्धि दिखाई दी, जिसके प्रेरक थे धातुएँ, ऊर्जा और खाद्यान्न वस्तुएँ, जबकि 1990 के दशक के दौरान उनमें गिरावट, अलबत्ता सीमांतिक रूप से, देखी गयी थी। विश्व बैंक के न्यून एवं मध्यम आय वाले देशों के लिए पण्य मूल्य सूचकांक में भी 1980 के दशक और 1990 के दशक में अपस्फीति की प्रवृत्ति की तुलना में वर्तमान दशक के दौरान तेज वृद्धि दर्शायी गयी है। 1970 के दशक के अंत की तुलना में खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति सबसे ऊँची थी, जबकि 1980 के दशक के अंत की तुलना में धातुओं और गैर-ईंधन वस्तुओं के मूल्य सबसे अधिक थे। इसके प्रेरक तत्व रहे हैं विश्व अर्थव्यवस्था के तगड़े और स्थिर कार्यसंपादन, अनेक बड़ी विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में द्रुत वृद्धि तथा संरचनात्मक परिवर्तन और नीति निर्माताओं एवं बाजार प्रतिभागियों द्वारा वातावरण परिवर्तन की चुनौतियों पर अधिक ध्यान दिया जाना और आरक्षित निधियों का सिकुड़ता जाना (अंकटाड, 2008)। इसके अतिरिक्त, पण्य-मूल्य चक्र पूर्ववर्ती चक्रों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक दीर्घीकृत था, जिसकी अगुआई व्यवसाय चक्र के निरंतर विस्तारक चरण द्वारा की गयी थी (बॉक्स VI.5)।

6.44 पण्य आयातकर्ताओं के लिए पण्य मूल्य आघात का निहितार्थ स्पष्ट रूप से भिन्न-भिन्न हो सकता है। पण्य मूल्य चक्र का विस्तारक चरण विविध सरणियों के माध्यम से काम कर सकता है। पहला, वस्तु मूल्य आघात देशी मूल्यों को अंतरण के अंश और विनिमय दर उतार-

चार्ट VI.7 : वैश्विक पण्य मूल्य-चक्र

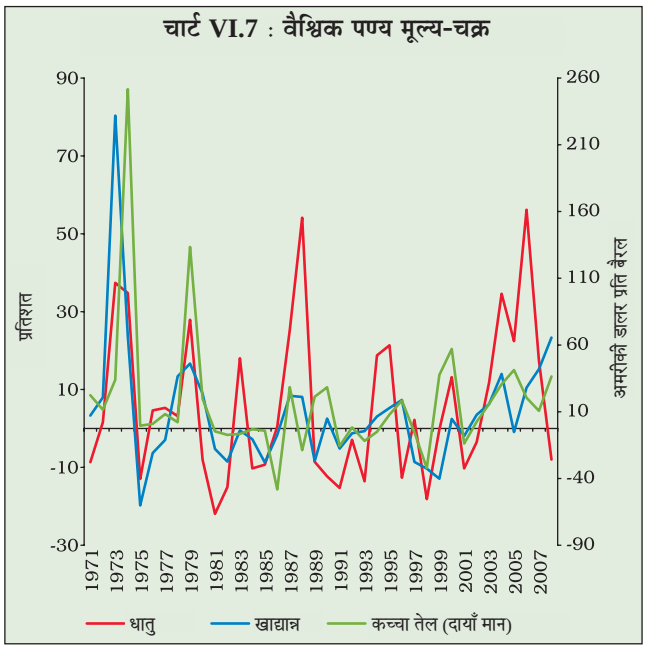

बॉक्स VI.5
वस्तु मूल्य का आस्ति कीमतों, निवेश, व्यापार और आर्थिक कार्यकलाप पर प्रभाव

अर्थव्यवस्थाओं पर वस्तु मूल्य में उतार-चढ़ाव का समग्र प्रभाव काफी अलग-अलग होता है, जो विदेश व्यापार की संरचना, उनकी सकल राष्ट्रीय आय में वस्तु-निर्यात और आयात के आपेक्षिक भारांक और मूल्य अनुक्रियाशीलता पर निर्भर करता है। वस्तुओं का निर्यात करने वाले देशों के लिए प्राथमिक वस्तुओं के उच्चतर मूल्य का अनुकूल प्रभाव उन्नत निर्यात-आय के माध्यम से होता है। यह, बदले में, आधारभूत संरचना और उत्पादन क्षमताओं के लिए नये निवेशों का वित्तपोषण किये जाने की संभावना को बढ़ाता है, जिससे देशी उत्पादन कार्यकलाप, उपभोग और रोजगार बढ़ते हैं। तथापि, वस्तु-मूल्य में तेजी का देशी कार्यकलाप पर प्रभाव भी निर्यात अधिशेष के देशी उपभोग बनाम निवेश के लिए आबंटन किये जाने पर निर्भर करेगा। वस्तु-मूल्य में तेजी से उत्पन्न निर्यात अधिशेष के विपथन से आय के अंतर-कालिक वितरण और निर्बाध उपभोग में मदद मिल सकती है। वस्तु-मूल्य चक्र में विस्तार के लाभकारी प्रभाव के होने पर भी मूल्य-चक्र में अचानक बढ़ोतरी होने से डच-डिजीज हो सकता है, जो वास्तविक विनिमय दर में तेज मूल्यवृद्धि के माध्यम से गैर-तिजारती प्रतिस्पर्धात्मकता को कम कर सकता है।

चढ़ाव को देखते हुए सीधे प्रभावित कर सकते हैं। पुन:, यह देखते हुए कि प्राथमिक वस्तुएँ, यथा, तेल और धातुएँ, विनिर्माण और परिवहन के लिए निविष्टि के रूप में आती हैं, आयात मूल्य में बढ़ोतरी का दूसरे दौर का प्रभाव विनिर्मित वस्तुओं के देशी मूल्य और उच्चतर परिवहन लागत पर पड़ता है। दूसरा, वैश्विक पण्य मूल्य में बढ़ोतरी आयातकर्ता देशों के व्यापार संतुलन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है। विशेष रूप से तेल के मामले में, जहां मांग अपेक्षाकृत कम मूल्य लोच का हो, वहाँ मूल्य आघात के चलते व्यापक चालू खाता घाटा (सीएडी) हो सकता है। इसके साथ ही, विनिर्मित उत्पादों के निर्यात में प्रतिस्पर्धी दबाव को देखते हुए, प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य में बढ़ोतरी निविष्टि की लागत पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है और, इसीलिए, निर्यात में प्रतिस्पर्धात्मकता हो सकती है। तीसरा, वस्तु मूल्य का अप्रत्यक्ष प्रभाव उच्चतर स्फीतिकारक प्रत्याशाएँ हो सकती हैं, जो बदले में अर्थव्यवस्था में सांकेतिक ब्याज दर को बढ़ा सकती हैं। पुन:, वस्तु-मूल्य प्रेरित मुद्रास्फीति में कोई बढ़ोतरी होने से देशी मूल्यों में अधिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है और, इसीलिए, निवेश वातावरण के बारे में अधिक अनिश्चितता आ सकती है, जो कारपोरेटों और फर्मों के निवेश संबंधी निर्णयों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है।

6.45 वर्ष 2000 और 2007 के बीच हाल के पण्य-चक्र के चरण के दौरान विकासशील और संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाओं में, जो कच्चे तेल और खनिजों के निर्यातक हैं, व्यापार की शर्तों में सुधार दिखाई पड़ा। तथापि, विकासशील देश ने, जो श्रम-प्रधान विनिर्मित वस्तुओं के निर्यातकर्ता के रूप में उभरे हैं और तेल के निवल आयातकर्ता हैं, अपने व्यापार की शर्तों में महत्त्वपूर्ण ह्रास का अनुभव किया है। अंतरराष्ट्रीय तेल-कीमतों का औद्योगिक देशों और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात मूल्यों में अंतरण, जैसाकि वेक्टर ऑटो रिग्रेसन मॉडल से उद्भूत ग्रैंजर कारणत्व संबंध से स्पष्ट है, सभी देशों में मुद्रास्फीति में अंतर्निहित वैश्विक व्यापार के बारे में महत्त्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। औद्योगिक देशों के लेए निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति का कारण तेल-मूल्य मुद्रास्फीति रहा है, लेकिन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए इसका कारण तेल मूल्य मुद्रास्फीति और उन्नत देशों की निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति रहा है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि एक नियंत्रित मूल्य-तंत्र के अभाव में औद्योगिक देश इस स्थिति में थे कि वे तेल-मूल्य प्रभाव का कुछ बोझ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को निर्यातित सामान के उच्चतर मूल्य के माध्यम से अंतरित कर सकें। तथापि, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ इस स्थिति में नहीं थीं कि वे मुद्रास्फीति में औद्योगिक देशों में व्यापार करें। पुन:, व्यापारयोग्य और गैर-व्यापारयोग्य वस्तुओं के बीच पारस्परिक क्रिया निर्यात मूल्य, आयात मूल्य और देशी उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति के बीच औद्योगिक और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए कार्य-कारण संबंध से स्पष्ट थी। औद्योगिक देशों के लिए व्यापारयोग्य मदों के मूल्य का महत्त्वपूर्ण कारणत्व साहचर्य देशी उपभोक्ता मूल्य के साथ था; उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में आयात मूल्य की अपेक्षा निर्यात मूल्य का महत्त्वपूर्ण कारणत्व संबंध देशी मूल्यों के साथ था (सारणी 6.20)।

सारणी 6.20 : अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों का विकसित एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात-मूल्य में अंतरण : ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण

नल्ल हाइपोथेसिस:एक्स के कारण वाई नहीं होता	चाइ-स्क्वेयर स्टैटिक	स्वीकार/ अस्वीकार करें
1	2	3
(i) तेल की कीमतें औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करतीं	30.66 (0.00)	अस्वीकार करें
(ii) उभरते देशों के निर्यात मूल्य औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	15.26 (0.23)	स्वीकार करें
(iii) तेल की कीमतें उभरते बाजार वाले देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करतीं	43.23 (0.00)	अस्वीकार करें
(iv) औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य उभरते बाजार वाले देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	41.67 (0.00)	अस्वीकार करें
(v) औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य तेल की कीमतों को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	21.75 (0.04)	अस्वीकार करें
(vi) उभरते देशों के निर्यात मूल्य तेल की कीमतों को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	25.70 (0.01)	अस्वीकार करें

6.46 वैश्विक मूल्य का अंतरण भारत के देशी मूल्य में दो चरणों में देखा गया। पहला, वैश्विक और क्षेत्रीय स्तरों पर व्यापारिक भागीदारों के निर्यात मूल्य भारत के आयात मूल्य पर फैल जाते हैं। दूसरा, आयात मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव उत्पादन की लागत और वस्तु एवं सेवाओं की देशी आपूर्ति पर होता है, इस प्रकार, उत्पादक के मूल्य द्वारा मापी गयी सकल देशी मुद्रास्फीति प्रभावित होती है, जो भारत में थोक मूल्य से संबंध रखती है। भारतीय संदर्भ में, अर्थव्यवस्था पर वैश्विक पण्य-चक्र का सबसे अधिक सीधा प्रभाव प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य के माध्यम से होता है।

6.47 1960 के दशक से लेकर 1990 के दशक में देखी गयी प्रवृत्ति की तुलना में 2000 के दशक में देशी मुद्रा में सकल आयात मूल्य मुद्रास्फीति महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुई। दूसरा, भारत के आयात के विदेशी मूल्य को आँकना (विदेशी मुद्रा, यथा, अमरीकी डालर, में आयात का मूल्य) रोचक होगा, क्योंकि देशी मुद्रा में आयात मूल्य पर विनिमय दर का प्रभाव होता है। देशी मुद्रा में आयात मूल्य से प्रकट होता है कि सिवाय 1970 के दशक के, जब तेल मूल्य आघात हुआ था, अमरीकी डालर में भारत की आयात मूल्य मुद्रास्फीति में 1950 के दशक से लेकर 1990 के दशक तक गिरावट बनी रही। तथापि, वर्तमान दशक में, अब तक आयात मूल्य मुद्रास्फीति का ऐसा माप औसतन 5.2 प्रतिशत रहा है, जबकि इसके विपरीत 1990 के दशक में इसमें गिरावट की प्रवृत्ति देखी गयी थी और 1980 के दशक में यह कम रही थी।

सारणी 6.21 : भारत के आयात मूल्य का वैश्विक एवं क्षेत्रीय निर्यात मूल्यों से सहसंबंध

	भारत	ईएमई	औद्योगिक देश	तेल उत्पादक देश	विश्व
1	2	3	4	5	6
भारत	1.00				
उभरते	0.68	1.00			
औद्योगिक	0.63	0.71	1.00		
तेल	0.72	0.84	0.57	1.00	
विश्व	0.70	0.86	0.97	0.72	1.00

6.48 अमरीकी डालर में भारत की आयात मूल्य मुद्रास्फीति का वैश्विक और क्षेत्रीय स्तरों पर औद्योगिक, विकासशील एवं तेल निर्यातक देशों के साथ सहसंबंध, जो वार्षिक आँकड़ों पर आधारित है, यह प्रकट करता है कि तेल-मूल्य अर्थव्यवस्थाओं की निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति का बड़ा सहसंबंध भारत के आयात मूल्य के साथ है (सारणी 6.21)। इससे पता चलता है कि तेल मूल्य आघात भारत में मूल्य-स्थिरता के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बाह्य आघात होते हैं।

6.49 देशी मुद्रा में भारत के आयात मूल्य का देशी मूल्यों के साथ सहसंबंध यह बताता है कि आयात मूल्य सूचकांक का लगभग पूर्ण सहसंबंध देशी मूल्य सूचकांक के साथ होता है (सारणी 6.22)। चूँकि ऐसे सहसंबंध के बारे में वैरिएबल्स में अभिप्रेत घटकों के चलते अतिशयोक्ति की जा सकती है, अत: यह युक्तियुक्त होगा कि मुद्रास्फीति दरों के सहसंबंध पर विचार किया जाये। आयात मूल्य मुद्रास्फीति का भी एक महत्त्वपूर्ण सहसंबंध देशी मुद्रास्फीति के साथ होता है।

6.50 भारत पर वैश्विक पण्य मूल्य आघात के संचरण की एक प्रमुख सरणी तेल आयात है। तेल आयात के बढ़ते हिस्से का कारण अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्य में तेज वृद्धि को और तेल आयात के परिमाण में वृद्धि को माना जा सकता है। पेट्रोलियम आयोजना विश्लेषण

सारणी 6.22 : भारत के आयात मूल्य सूचकांक का देशी मूल्यों (डब्लूपीआइ) के साथ सहसंबंध

वैरिएबल्स	आयात मूल्य सूचकांक का देशी मूल्य सूचकांक के साथ सहसंबंध 1950-2008	आयात मूल्य मुद्रास्फीति का देशी मुद्रास्फीति दरों के साथ सहसंबंध 1950-2008
1	2	3
डब्लूपीआई	0.99	0.61
देशी ईंधन मूल्य	0.99	0.62
देशी विनिर्मित वस्तु मूल्य	0.99	0.56
विनिमय दर	0.96	0.19

सारणी 6.23 : तेल आयात परिमाण वृद्धि

(प्रतिशत)

वर्ष	देशी उपभोग वृद्धि	तेल आयात (सकल) परिमाण वृद्धि	तेल आयात (निवल) परिमाण वृद्धि
1	2	3	4
1997-98	6.5		
1998-99	7.4	10.6	14.1
1999-00	7.2	17.0	17.2
2000-01	3.1	12.0	1.8
2001-02	0.4	2.8	0.8
2002-03	3.7	4.1	4.4
2003-04	3.5	10.3	6.2
2004-05	3.6	6.4	3.2
2005-06	1.4	7.8	3.4
2006-07	6.7	14.5	6.9
2007-08	6.8	11.6	8.2
2008-09	3.6	1.6	6.0
2009-10	3.4	–	–
1997-98 से 2008-09	4.5	9.0	6.6
2000-01 से 2008-09	3.6	7.9	4.5

टिप्पणी : सकल के संदर्भ में परिमाण की दृष्टि से कुल तेल आयात में कच्चे तेल का आयात और तैयार पेट्रोलियम उत्पाद शामिल हैं । निवल के सदर्भ में तेल आयात परिमाण वृद्धि कुल तेल आयात के परिमाण में वृद्धि घटाव तेल निर्यात के परिमाण से संबंधित है ।

स्रोत : पेट्रोलियम आयोजना विश्लेषण कक्ष (पीपीएसी), पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भारत सरकार ।

कक्ष (पीपीएसी), पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भारत सरकार, के अनुसार तेल आयात के परिमाण में वर्ष 2000-01 से लेकर 2008-09 के दौरान प्रति वर्ष औसतन 7.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई। उसी अवधि के दौरान भारत में पेट्रोलियम उत्पादों की घरेलू खपत में वृद्धि, मात्रा की दृष्टि से, 3.6 प्रतिशत पर कम रही (सारणी 6.23)। तेल की खपत की मांग और तेल खपत की आयात-तीव्रता के बारे में ये रीतिबद्ध तथ्य प्रचुरता से यह प्रकट करते हैं कि भारत में बड़े मूल्य आघात महत्त्वपूर्ण रूप से वैश्विक तेल मूल्य आघातों के चलते हुए हैं (चार्ट VI.8)। वर्ष 2008-09 में भी मूल्य आघात मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्यों के चलते हुए।

6.51 मूल्य आघातों की एक दूसरी सरणी, विशेष रूप से हाल के वर्षों के दौरान, खाद्यान्न के अंतरराष्ट्रीय मूल्य में अस्थिर उतार-चढ़ाव रहा है। अंतरराष्ट्रीय खाद्यान्न मूल्यों में वृद्धि का संचरण परिवर्ती अंशों में अंतरराष्ट्रीय बाजारों से स्थानीय बाजारों में हुआ है (आइएफपीआरआई, 2008)। अंतरराष्ट्रीय बाजारों से देशी बाजारों तक मूल्य-परिवर्तन के इस परिवर्ती संचरण का कारण आयात-निर्भरता, विनिमय दर की प्रवृत्ति, घरेलू नीतियों और विवेकाधीन बाजार खंडीकरण, परिवहन लागत तथा स्वाभाविक बाजार खंडीकरण एवं बाजार की संरचना से संबंधित अपूर्ण संचरण को और मोनोपोलिस्टिक/मोनोप्सोनिस्टिक ताकत के अस्तित्व को माना जा सकता है। मूल्य सूचकांक में खाद्यान्न मूल्यों के भारांक पर निर्भर करते हुए, इसका समग्र मुद्रास्फीति पर प्रभाव भी सभी देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार से हुआ है।

6.52 दशकों से खाद्यान्न आयात पर भारत की निर्भरता में सामान्यत: गिरावट आयी है, जैसाकि वर्षों से कुल आयात में खाद्यान्न आयात के घटते हिस्से में प्रतिबिंबित होता है (सारणी 6.24)। 2000 के दशक के दौरान, यद्यपि कुल आयात समूह में भारत का खाद्यान्न आयात महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुआ, फिर भी खाद्यान्न मूल्यों का पण्य बाजारों के द्रुत वित्तीयकरण के माध्यम से वैश्विक एकीकरण होने के चलते देशी और विश्व खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति में सहसंबंध बढ़ कर 0.57 हो गया। वास्तव में, 2000 के दशक का वैश्विक पण्य-चक्र यह बताता है कि भारत के खाद्यान्न मूल्यों में विस्तारक चरण ने निकट रूप से

चार्ट VI.8 : तेल और खाद्यान्न की कीमतें

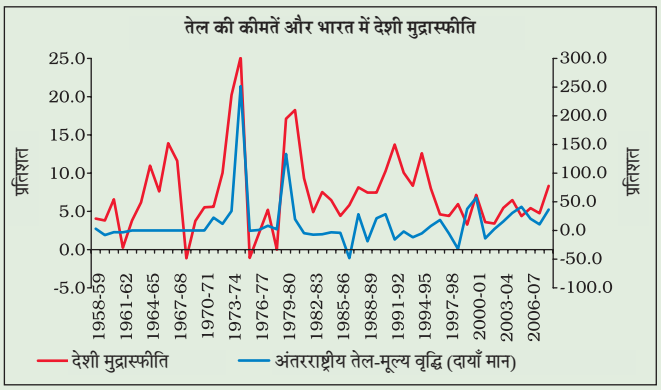

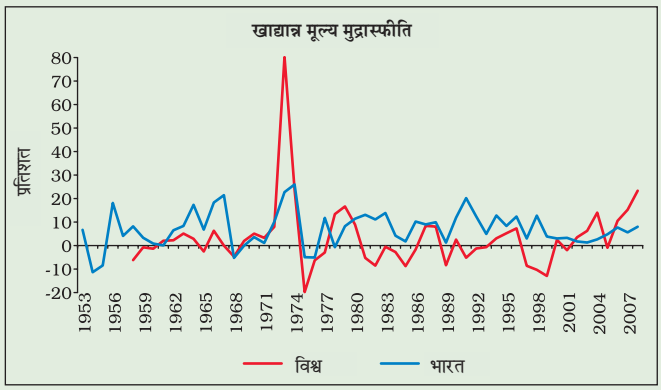

सारणी 6.24 : भारत का खाद्यान्न आयात और निर्यात

अवधि	खाद्यान्न आयात (कुल आयात में प्रतिशत)	खाद्यान्न निर्यात (कुल निर्यात में प्रतिशत)
1	2	3
1960 का दशक	34.3	23.2
1970 का दशक	31.7	18.3
1980 का दशक	23.5	8.3
1990 का दशक	16.8	5.0
2000 का दशक	10.8	4.8

स्रोत : विश्व बैंक, अंकटाड

वैश्विक पण्य मूल्य चक्र का अनुसरण किया। देशी और अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के बीच सहसंबंध गुणांक के पण्यवार विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि वर्ष 1995-2008 की अवधि के दौरान देशी खाद्य तेल मूल्यों का तगड़ा धनात्मक सहसंबंध अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के साथ था, जो आयात पर निर्भरता को प्रतिबिंबित करता है, क्योंकि भारत की उपभोग संबंधी आवश्यकताओं के एक बड़े भाग की पूर्ति आयातों के माध्यम से (30 प्रतिशत से अधिक) होती है (राजमल और मिश्रा, 2009)। खाद्यान्नों और खाद्य तेलों, दोनों के घरेलू मूल्य अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के आगे-पीछे चलने लगे हैं, खास कर उत्तरार्ध, अर्थात्, वर्ष 2002-2008 की अवधि में, क्योंकि कृषि-पण्य के व्यापार में वृद्धि हुई है।

6.53 देशी आपूर्ति और मांग में संतुलन भी घरेलू कीमतों पर अंतरराष्ट्रीय आघातों के संचरण का अनुकूलन करते हैं। खाद्य तेलों के मामले में मांग घरेलू आपूर्ति से आगे बढ़ गयी और इसमें हुए घाटे को आयात के माध्यम से पूरा किया गया (सारणी 6.25)। दलहन का उत्पादन भी मांग से पिछड़ गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इसके लिए 10 प्रतिशत से अधिक आयात पर निर्भर करना पड़ा। वैश्विक

सारणी 6.25 : उपभोग की अपेक्षाओं के लिए आयात पर भारत की निर्भरता

अवधि	कुल उपभोग में आयात का प्रतिशत हिस्सा			
	गेहूँ	दालें	चीनी	खाद्य तेल
1	2	3	4	5
2001-02	-3.7	13.3	-0.5	41.7
2002-03	-6.8	14.2	-0.6	47.9
2003-04	-6.4	9.5	-0.5	42.9
2004-05	-3	7.5	0.3	38.9
2005-06	-1.1	8.5	0.1	34.1
2006-07	7.4	12.5	-0.5	33.5
2007-08	2.2	14.8	-1.4	31.1

स्रोत : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार।

खाद्यान्न मूल्य आघातों का घरेलू कीमतों पर अंतरण का अंतत: अनुकूलन आयात कोटा एवं लीइसेंसीकरण, सीमा-शुल्क तथा घरेलू राजकोषीय उपायों के रूप में व्यापार-नीति हस्तक्षेप द्वारा किया जायेगा। तथापि, अंतरराष्ट्रीय खाद्यान्न की कीमतों में निरंतर उतार-चढ़ाव का प्रभाव, अल्पावधि स्थिरता के बावजूद, घरेलू मूल्यों पर पड़ेगा।

6.54 अनुभवमूलक निष्कर्षों से पता चलता है कि वैश्विक कारक (आयात मूल्य, पूँजी प्रवाह, और विनिमय दर में उतार-चढ़ाव) भारत में घरेलू मुद्रास्फीति में लगभग 20 से 30 प्रतिशत तक घट-बढ़ को स्पष्ट करते हैं (राज, जैन और धल, 2009)। दीर्घावधि में, आयात मूल्य, पूँजी प्रवाह और विनिमय दरों का महत्त्वपूर्ण सकारात्मक संबंध घरेलू मुद्रास्फीति से हो सकता है। ब्याज दर वैरिएबल का घरेलू मूल्यों के साथ दीर्घावधि में नकारात्मक संबंध होता है, यद्यपि इसका सांख्यिकीय महत्त्व अन्य वैरिएबलों की तरह उतना अधिक नहीं होता है। पूंजी प्रवाह का घरेलू कीमतों पर प्रभाव आयात मूल्यों से और विनिमय दरों की तुलना में अधिक स्पष्ट हो सकता है, क्योंकि पूँजी प्रवाह बादवाले को प्रभावित करते हैं।

सेवाओं में व्यापार तथा प्रेषण के माध्यम से प्रभाव

6.55 व्यापार सरणी वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव का संचरण सेवा-निर्यात मांग के माध्यम से भी करती है। भारत के सेवा-क्षेत्र की व्यापार योग्यता में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी देखी गयी है, जिसमें जीडीपी में सेवा निर्यात का अनुपात, जो वर्ष 1990-91 में 3.2 प्रतिशत था, पांच गुना बढ़ कर वर्ष 2008-09 में 15.1 प्रतिशत हो गया। सेवा-निर्यात के क्षेत्र में भारत वर्ष 2008 के दौरान विश्व में पहले दस देशों में से एक था (सारणी 6.26)। ईएमई के बीच, भारत का स्थान ऊँचाई पर था, जो सेवा-निर्यात में चीन के बाद दूसरे स्थान पर था।

6.56 सेवा-निर्यात का एक बड़ा भाग (लगभग 46 प्रतिशत) व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग (बीपीओ) और सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाओं (आइटीईएस) के रूप में था, जिसके प्रेरक सूचना प्रौद्योगिकी के स्फोट हैं और वे रोजगार प्रधान हैं, जिसमें लगभग 2 मिलियन लोगों को सीधे रोजगार मिलने का अनुमान है। चूँकि सॉफ्टवेयर निर्यात की कुल मांग का लगभग 80 प्रतिशत अमेरिका और यूके से आता है, अत: इन अर्थव्यवस्थाओं में तीव्र संकुचन होने का प्रतिकूल प्रभाव सॉफ्टवेयर निर्यात के लिए मांग पर हुआ। सॉफ्टवेयर सेवाओं के लिए मांग में संकुचन का प्रतिकूल प्रभाव रोजगार वृद्धि पर पड़ा

सारणी 6.26: वर्ष 2008 में शीर्ष सेवा निर्यातकों के बीच भारत की तुलनात्मक स्थिति

देश	निर्यात (बिलियन अमरीकी डालर)	हिस्सा (%)
1	2	3
1. अमेरिका	545.6	15.3
2. यूके	286.9	8.1
3. जर्मनी	246.7	6.9
4. फ्रांस	161.8	4.5
5. जापान	148.8	4.2
6. चीन	147.1	4.1
7. स्पेन	143.6	4.0
8. इटली	123.5	3.5
9. नीदरलैंड्स	104.5	2.9
10. **भारत**	**103.0**	**2.9**
11. आयरलैंड	99.29	2.8
12. हांगकांग	92.3	2.6
13. बेल्जियम	88.99	2.5

टिप्पणी : हिस्से की गणना बीओपीएसवाइ, अक्तूबर, 2009 में सभी देशों के लिए उपलब्ध सेवा निर्यात के आँकड़ों को जोड़ कर की गयी है । तथापि, वास्तविक हिस्सा यहां परिकलित हिस्से से थोड़ा भिन्न हो सकता है ।

स्रोत : बीओपीएसवाइ, आईएमएफ, अक्तूबर, 2009

और, इस प्रकार, इस क्षेत्र पर आश्रित कार्यबल की उपभोग-मांग में कमी आयी।

6.57 वणिक माल व्यापार से जुड़े सेवाओं के निर्यात और आयात भी भारत में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से वणिक माल व्यापार में संकुचन से प्रभावित हुए हैं। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से वणिक माल निर्यात में संपीडन ने संबंधित सेवाओं, यथा, परिवहन, बीमा और वित्तीय सेवाओं, से संबंधित निर्यात को प्रभावित किया है, जो इन सेवाओं के वणिक माल निर्यात में समकालिक उतार-चढ़ाव में इंद्रियगोचर होता है। इसी प्रकार, व्यापार से संबंधित सेवाओं के आयात पर भी वणिक माल आयात में गिरावट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, जैसाकि वर्षों से, जिसमें वर्तमान संकट अवधि शामिल है, उनके सह-गमन से स्पष्ट है (चार्ट VI.9)।

6.58 यद्यपि भारत में सभी स्तरों पर सेवा-निर्यात पर हाल के वैश्विक संकट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, फिर भी विविध सेवाओं के निर्यात ने, जिनकी अगुआई प्रमुख रूप से सॉफ्टवेयर निर्यात ने की, आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया, जैसाकि मंद सकारात्मक वृद्धि से स्पष्ट होता है। जबकि अन्य सभी उप-समूहों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से संकुचन हुआ, इस अवधि के दौरान बीमा सेवाओं के निर्यात में सबसे अधिक गिरावट देखी गयी, जिसके बाद यात्रा और परिवहन का स्थान आता है। सेवाओं के आयात के मामले में, बीमा सेवाओं ने आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया, जैसाकि उनकी धनात्मक वृद्धि में प्रतिबिंबित होता है, जबकि अन्य सेवाओं के आयात में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान प्रपाती संकुचन दर्ज किया गया। विभिन्न सेवाओं के आयात के बीच विविध सेवाओं के आयात में, जो अधिकतर व्यवसाय-सेवाओं से प्रेरित था, सर्वाधिक गिरावट आयी, जिसके बाद यात्रा और परिवहन सेवा का स्थान है (सारणी 6.27)।

6.59 यात्री सेवाएँ, जिनमें खाद्य, हॉटेल एवं परिवहन जैसे क्षेत्रों में विदेशी पर्यटकों के माध्यम से आमदनी शामिल है, भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई हैं और वे घरेलू उपभोग मांग को प्रभावित करती हैं। भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन में

चार्ट VI.9 : व्यापार संबद्ध सेवाएँ

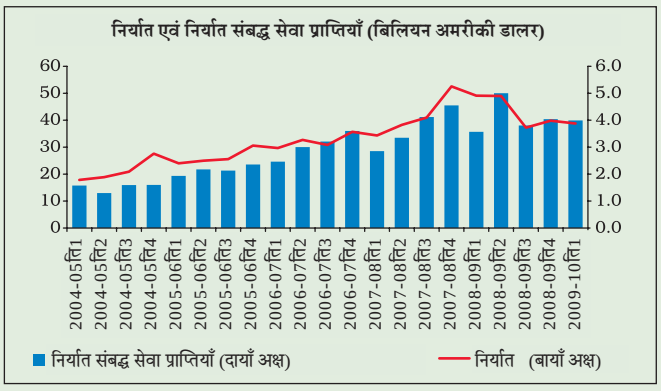

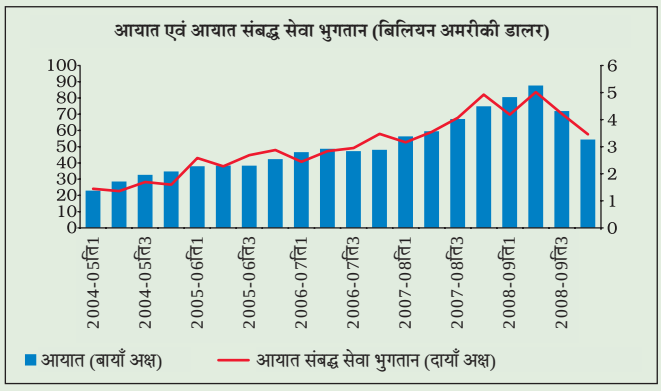

सारणी 6.27 : सेवा निर्यात और आयात में वृद्धि (अमरीकी डालर)

(प्रतिशत)

कोटि	2000-2001	2001-2002	2002-2005	2005-2008	2008-2009: छ1	2008-2009: छ2	2009-2010: छ1
1	2	3	4	5	6	7	8
			निर्यात				
सेवा	3.6	5.4	37.2	27.8	28.9	-0.5	-18.5
यात्रा	15.2	-10.3	30.0	19.5	22.0	-20.1	-8.8
परिवहन	19.9	5.6	29.9	28.9	37.9	-8.0	-10.6
बीमा	16.9	6.7	49.8	23.9	0.4	-25.2	6.1
विविध	-3.4	12.6	41.9	29.8	29.4	5.0	-21.5
			आयात				
सेवा	25.2	-5.2	29.3	23.6	17.3	-15.5	-4.9
यात्रा	31.1	7.5	21.5	21.9	23.1	-13.9	-9.8
परिवहन	47.6	-2.6	20.2	41.1	39.1	-11.3	-29.4
बीमा	82.8	25.6	42.5	24.9	13.9	3.8	22.9
विविध	14.4	-11.7	38.3	23.9	6.6	-20.6	8.7

छ1: अप्रैल-सितंबर; छ2: अक्तूबर-मार्च.
स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक

वृद्धि, जो वर्ष 2007 में 14.3 प्रतिशत थी, वह वर्ष 2008 में घट कर (-) 4.0 प्रतिशत रह गयी (सारणी 6.28)। वास्तव में, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान, जब वैश्विक वित्तीय संकट अपने चरम पर था, व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार क्षेत्र की वृद्धि में

सारणी 6.28 : पर्यटन क्षेत्र से भारत की विदेशी मुद्रा आय

अवधि	विदेशी पर्यटकों का आगमन (प्रतिशत वृद्धि)			विदेशी मुद्रा आय (बिलियन अमरीकी डालर)		
1	2	3	4	5	6	7
माह	**2007**	**2008**	**2009**	**2007**	**2008**	**2009**
जनवरी	16.6	4.5	-17.6	1.1	1.4	0.9
फरवरी	14.3	21.9	-10.6	1.0	1.3	0.9
मार्च	20.8	1.5	-12.9	0.9	1.2	0.9
अप्रैल	13.4	3.0	-3.5	0.8	0.9	0.8
मई	8.6	9.9	-1.9	0.6	0.7	0.7
जून	11.5	10.0	0.2	0.7	0.8	0.8
जुलाई	18.5	8.0	0.6	0.8	0.9	1.0
अगस्त	17.8	6.9	-8.6	0.8	0.8	0.9
सितंबर	1.3	13.2	-4.1	0.6	0.7	0.8
अक्तूबर	13.6	1.2	-0.9	1.0	0.9	1.0
नवंबर	20.3	-0.1	-0.6	1.1	1.0	1.2
दिसंबर	10.2	-10.5	21.0	1.3	1.0	1.5
पूरी अवधि	14.3	4.0	-3.3	9.4	10.7	11.4

*: वृद्धि दर जनवरी-अक्तूबर 2009 की अवधि के लिए है।
स्रोत : पर्यटन मंत्रालय

गिरावट आ कर वह 12.5 प्रतिशत से 6.1 प्रतिशत पर आ गयी, जो यात्रा एवं पर्यटन में बाह्य मांग के कम होने के चलते प्रतीत होती है।

धन-प्रेषण

6.60 भारत की वास्तविक अर्थव्यवस्था पर वैश्विक आघात के संचरण की एक और सरणी अंशत: धन-प्रेषण सरणी हो सकती है। हाल ही में भारत में आवक धन-प्रेषणों के भौगोलिक स्रोत में एक सूक्ष्म बदलाव देखा गया है, जिसमें खाड़ी क्षेत्र, यूरोप और अफ्रीका से धन-प्रेषण में वृद्धि देखी गयी है, जबकि उत्तरी अमेरिका और पूर्वी एशिया से धन-प्रेषण में गिरावट देखी गयी है। तथापि, धन-प्रेषण के दो महत्त्वपूर्ण मूल स्रोत अमेरिका और तेल उत्पादक खाड़ी के देश हैं। यह अनुमान है कि ये दो क्षेत्र भारत के कामगारों द्वारा भेजे गये धन के लगभग दो-तिहाई हिस्से में योगदान करते हैं। जबकि अमेरिका से आनेवाला धन वहाँ के आर्थिक कार्यकलाप से प्रभावित होता है, खाड़ी के देशों से आनेवाला धन तेल राजस्व में प्रतिबिंबित कार्यकलाप की गति से अनुकूलित होता है। हाल के संकट के दौरान, जबकि अमेरिका से आनेवाला धन वहाँ के वास्तविक कार्यकलाप में तीव्र संकुचन तथा प्रवासियों के बीच बेरोजगारी से प्रभावित हुआ हो सकता है, खाड़ी के देशों से आने वाले धन पर वैश्विक संकट का प्रतिकूल प्रभाव तेल मूल्यों में गिरावट के माध्यम से कार्य कर रहा प्रतीत होता है, जिसने बदले में खाड़ी क्षेत्र में निर्माण और सेवा-क्षेत्रों में प्रवासी रोजगार को प्रभावित किया हो सकता है। हाल की अवधि के दौरान, जिसमें संकट की अवधि शामिल है, तेल के मूल्य और धन-प्रेषण में समकालिक उतार-चढ़ाव दिखाई पड़ा, जो भारत में आवक धन-प्रेषण में तेल मूल्य प्रेरित कटौती के ऋणात्मक प्रभाव को परिपुष्ट करता है (चार्ट VI.10)। आवक धन-प्रेषण में कटौती, विशेष रूप से न्यून मूल्य वाले धन-प्रेषण में कटौती, आश्रित परिवारों की प्रयोज्य आय को सीधे प्रभावित करती है और, इसीलिए उनके खर्च करने की प्रवृत्ति को प्रभावित करती है। यह मानते हुए कि भारत में आवक धन-प्रेषण का एक बड़ा हिस्सा (भारत में कुल आवक धन-प्रेषण के 50 प्रतिशत से अधिक) परिवार के निर्वाह के लिए होता है, वैश्विक आघात के बाद आवक धन-प्रेषण में ऋणात्मक वृद्धि आश्रित परिवारों की उपभोग मांग पर प्रतिकूल प्रभाव डाल चुकी हो सकती है।

6.61 तदनुसार, उन्नत देशों और खाड़ी के देशों से भारत में आने वाले निजी धन-प्रेषण, जिनमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही तक

चार्ट VI.10 : धन-प्रेषण : प्रवृत्ति और अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों के साथ संबंध

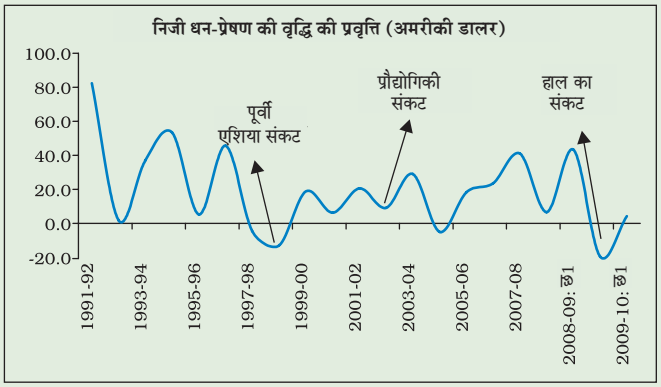

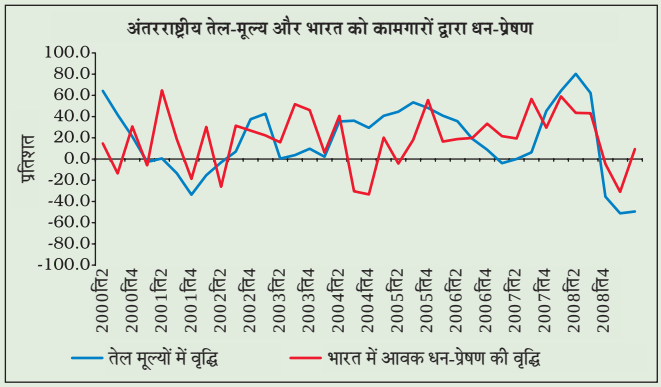

उछाल बना रहा, को धक्का लगा और उसमें वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट आयी। वास्तव में, निजी धन-प्रेषण में वृद्धि, जो वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में 46.3 प्रतिशत पर थी, वह गिर कर दूसरी छमाही में (-)19.4 प्रतिशत पर आ गयी, लेकिन वर्ष 2009-10 की पहली छमाही में सुधर कर 4.3 प्रतिशत हो गयी। पूर्व में आये अंतरराष्ट्रीय संकटों, यथा, पूर्वी एशिया संकट (1997 और 1998) तथा प्रौद्योगिकी संकट (2000 और 2001), के दौरान भी भारत में आने वाले निजी धन-प्रेषण की प्रवृत्ति वैश्विक आर्थिक गति सिद्धांत के अनुरूप रही और उसमें तीव्र गिरावट दिखाई पड़ी।

सॉफ्टवेयर निर्यात

6.62 भारत सॉफ्टवेयर सेवाओं के निर्यातकों में शीर्ष स्थान पर बना रहा, जिसके बाद आयरलैंड का स्थान है (सारणी 6.29)। चूँकि वैश्विक बैंक और वित्तीय संस्थाएँ, जो वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट से बुरी तरह प्रभावित हुई थीं, भारतीय सॉफ्टवेयर प्रदाताओं के बड़े ग्राहक थे, अत: वैश्विक संकट का प्रभाव ऐसी संस्थाओं को किये जाने वाले निर्यात में गिरावट के रूप में पड़ा प्रतीत होता है।

6.63 हालाँकि भारत का सॉफ्टवेयर निर्यात वर्षों से तगड़ा बना रहा था, संकट के चलते वैश्विक मांग में गिरावट आने का प्रभाव सॉफ्टवेयर कंपनियों के निर्यात कार्यसंपादन पर कुछ हद तक हुआ (सारणी 6.30)। वैश्विक वित्तीय आघात की पृष्ठभूमि में बढ़ते दबाव

सारणी 6.29 : सॉफ्टवेयर सेवा-निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

देश	2000	2004	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7
1. भारत	**4.7**	**16.3**	**21.9**	**29.1**	**37.5**	**49.4**
2. आयरलैंड	7.5	18.8	19.6	21.0	26.1	34.5
3. जर्मनी	3.8	8.1	8.4	9.9	12.6	15.1
4. युनाइटेड किंगडम	4.3	11.3	10.8	12.6	14.2	12.9
5. युनाइटेड स्टेट्स	5.6	6.7	7.3	10.1	11.6	12.6
6. स्वीडन	1.2	2.5	2.7	3.6	6.5	7.6
7. इजरायल	4.2	4.4	4.5	5.3	5.8	6.9
8. नीदरलैंड्स	1.2	3.7	3.7	5.0	6.4	6.6
9. चीन	0.4	1.6	1.8	3.0	4.3	6.3
10. स्पेन	2.0	3.0	3.6	4.0	5.4	6.1
11. कनाडा	2.4	3.0	3.6	4.3	4.6	4.6
12. बेल्जियम	....	2.4	2.6	2.9	3.0	3.7

स्रोत : बीओपीएसवाई, आईएमएफ, अक्तूबर 2009

सारणी 6.30 : भारत का सॉफ्टवेयर सेवा निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

वर्ष	आईटी सेवा निर्यात	इंजीनियरिंग सेवाएँ	आईटीइएस-बीपीओ सेवाएँ	कुल सॉफ्टवेयर सेवा निर्यात
1	2	3	4	5
1995-96	0.8	–	–	0.8
2000-01	5.3	–	0.9	6.2
2001-02	6.2	–	1.5	7.6
2002-03	7.0	–	2.5	9.5
2003-04	7.3	2.5	3.1	12.9
2004-05	10.0	3.1	4.6	17.7
2005-06	13.3	4.0	6.3	23.6
2006-07	17.8	4.9	8.4	31.1
2007-08	23.1	6.4	10.9	40.4
2008-09	26.5	7.1	12.7	46.3

आईटीइएस : आईटी-समर्थित सेवाएँ, बीपीओ : व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग

टिप्पणी : इंजीनियरिंग सेवा निर्यात का विश्लेषित विवरण 2003-04 और उसके बाद से उपलब्ध है; उस वर्ष के पहले उन्हें आईटी सेवाओं के साथ जोड़ा जाता था

स्रोत : सॉफ्टवेयर और सेवा कंपनियों का राष्ट्रीय एसोसिएशन (नैसकॉम)

के बावजूद वर्ष 2008-09 की पहली छमाही तक स्थिर बने रहने के बावजूद वे वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से मांग में गिरावट के चलते झुक गये और उनकी वृद्धि में तीव्र गिरावट आयी (बॉक्स VI.6)।

6.64 संक्षेप में, विश्व आय के प्रति भारत के निर्यात के अत्युच्च लोच को ध्यान में रखते हुए, संकुचित होती विश्व-आय का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से वणिक माल व्यापार में समग्र गिरावट

बॉक्स VI.6
वैश्विक संकट और सॉफ्टवेयर निर्यात पर इसका प्रभाव

भारत का सूचना प्रौद्योटगिकी और व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग (आईटी-बीपीओ) उद्योग कालक्रम में अर्थव्यवस्था में वृद्धि, निर्यात-आय, निवेश, रोजगार और समग्र आर्थिक एवं सामाजिक विकास के संदर्भ में एक प्रमुख क्षेत्र के रूप में उभरा है। इस क्षेत्र की बाह्य मांग पर निर्भरता को देखते हुए वर्तमान वैश्विक मंदी इस क्षेत्र के लिए प्रमुख चिंता का विषय बन कर उभरी है। वर्तमान संकट ने अनेक उन्नत देशों में वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हानियों की अगुआई की, मुख्यत: वर्ष 2008-09 में अमेरिका में, जो मुख्यत: भारतीय कंपनियों की सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) एवं आईटी संबद्ध सेवाओं पर बहुत हद तक निर्भर करती हैं और बड़ी संख्या में भारतीयों की नियुक्ति भी करती हैं। यह बात प्रचुरता से स्पष्ट होती है कि भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की वृद्धि का हाल की अवधि में अमेरिका की जीडीपी वृद्धि के साथ सहसंबंध रहा है।

पुन: अमेरिका की जीडीपी वृद्धि का भारतीय सॉफ्टवेयर उद्योग की वृद्धि के लिए क्या महत्त्व है, इसकी गवेषणा करने के लिए भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात, बाह्य मांग स्थितियों और विनिमय दर उतार-चढ़ाव के बीच सह-एकीकरण संबंध का अनुमान लगाते हुए की गयी है। इस अनुमान से प्रकट होता है कि मध्यावधि से दीर्घावधि में अमेरिका के कार्यकलाप-स्तर (लॉग वाइयुएस) में एक प्रतिशत की वृद्धि होने से भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात (लॉग एक्ससॉफ्ट) में 4 प्रतिशत की वृद्धि होती है। जहाँ तक विनिमय दर का संबंध है, विनिमय दर में एक प्रतिशत का ह्रास (लॉग इआरयूएसडी) होने से दीर्घावधि में सॉफ्टवेयर निर्यात में लगभग 2 प्रतिशत की वृद्धि होगी (सारणी 1)। यह उल्लेखनीय है कि भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात का बीजक बनाने में अमरीकी डालर एक प्रमुख मुद्रा होती है, जो कुल सॉफ्टवेयर निर्यात के लगभग 75 प्रतिशत के लिए जिम्मेवार है। इस प्रकार सह-एकीकरण संबंध भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात के लिए बाह्य मांग का निर्धारण करने में मेजबान देश में वास्तविक कार्यकलाप के प्रभुत्व को रेखांकित करता है।

सारणी 1: भारत को सॉफ्टवेयर निर्यात का दीर्घावधि सह-एकीकरण पथ

वैरिएबल्स	गुणांक
Log X^{soft}_{t-1} (सामान्यीकृत)	1.000
Log Y^{US}_{t-1}	4.20 (3.28)
Log E^{RUSD}_{t-1}	2.26 (9.57)
इंटरसेप्ट	40.44

वैरिएंस टिकंपोजिशन विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि सॉफ्टवेयर निर्यात (Log Xsoft) के विलंबित मूल्य प्रमुख रूप से अल्पावधि में भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं (सारणी 2)। मेजबान देश (Log Y^{us}) के वास्तविक कार्यकलाप मध्यावधि से दीर्घावधि में भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं। भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात मांग पर सांकेतिक विनिमय दर का प्रभाव भी अल्पावधि से दीर्घावधि में महत्त्वपूर्ण होता है, यद्यपि कालक्रम में इसमें कमी आती है। इससे यह प्रचुरता से प्रदर्शित होता है कि एक बड़े बाह्य मांग आघात ने भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात को प्रभावित किया।

यद्यपि भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात वर्षों से तगड़े बने रहे थे, फिर भी वैश्विक मांग में कमी आने का प्रभाव कुछ हद तक निर्यात कार्यसंपादन पर पड़ा, जो बाह्य मांग आघातों के महत्त्व को परिपुष्ट करता है, जैसाकि अनुमानित परिणामों से स्पष्ट है।

चार्ट : सॉफ्टवेयर निर्यात और बाह्य मांग

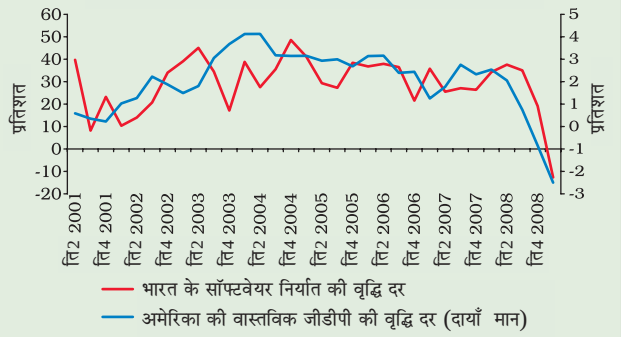

सारणी 2: सॉफ्टवेयर निर्यात का वैरिएंस डिकंपोजिशन

तिमाही	Log X^{soft}	Log Y^{US}	Log E^{RUSD}
1	63.2	0.3	36.5
4	40.6	14.0	45.4
8	15.5	41.9	42.6
12	7.0	62.3	30.7
16	3.9	71.1	25.1
20	2.4	75.7	21.9

में प्रतिबिंबित हुआ है। अनुभवमूलक दृष्टि से यह पाया गया कि गिरते वणिक माल व्यापार ने भारतीय अर्थव्यवस्था की समग्र वृद्धि पर खरोंच लगायी। यह देखा गया कि संकट के दौरान इंजीनियरी और रासायनिक वस्तुओं के निर्यात में समुत्थान बना रहा। फर्म-स्तरीय निर्यात उन्मुखता भी भारत के विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि में व्यापार सरणी के बढ़ते महत्त्व का प्रदर्शन करती है। एक ओर, संकुचित होते वणिक माल आयात ने सकल मांग के लिए गुंजाइश प्रदान की; दूसरी ओर, गैर-तेल आयात में गिरावट ने उद्योग की बढ़ती आयात-तीव्रता की पृष्ठभूमि में वृद्धि को निवेश के माध्यम से ऋणात्मक रूप से प्रभावित किया। इसके साथ ही, भारतीय अर्थव्यवस्था पर मूल्य आघात मुख्यत: तेल और खाद्यान्न मूल्य के माध्यम से संचरित हुआ।

6.65 समग्रत: देखा जाये, तो वैश्विक आर्थिक संकट के स्पिलओवर प्रभाव से चालू खाता संतुलन मुख्यत: वणिक माल व्यापार मार्ग से वर्ष 2008-09 के दौरान प्रभावित हुआ। जीडीपी के प्रतिशत के रूप में चालू खाता घाटा वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 2.4 प्रतिशत हो गया, जिसका कारण था बिगड़ती वैश्विक स्थिति की पृष्ठभूमि में विस्तारित व्यापार घाटा। भारतीय अर्थव्यवस्था पर व्यापार सरणी के प्रभाव पर चर्चा करने के बाद वित्तीय सरणी के माध्यम से स्पिलओवर प्रभाव की छानबीन निम्नलिखित खंड में की गयी है।

III. वित्तीय सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव

6.66 वित्तीय सरणी का घरेलू निवेश कार्यकलाप पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। वास्तव में यह तर्क दिया जाता रहा है कि भारत के मामले में सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान देशी निवेश में विदेशी बचत की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो गयी है (बॉक्स VI.7)। भारत की निवेश मांग पर वैश्विक आघातों का संचरण अनेक सरणियों के माध्यम से हो सकता है। इनमें पूँजी प्रवाह की प्रमुख सरणियाँ शामिल हैं, यथा, एफडीआई, संविभाग अंतर्वाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण और बैंकों के समुद्रपार उधार। ब्याज दर सरणी के अतिरिक्त, चलनिधि और ऋण जोखिम भी घरेलू निवेश कार्यकलाप को प्रभावित कर सकते हैं। प्रत्याशा सरणी, जो ईएमई आस्तियों के जोखिम-बोध में अचानक हुए परिवर्तन, निवेश वातावरण के बारे में अनिश्चितता और विनिमय दर उतार-चढ़ाव में तेज बदलाव की द्योतक है, का भी महत्त्वपूर्ण संबंध घरेलू निवेश मांग के साथ होता है।

6.67 वित्तीय सरणी के माध्यम से प्रसारित वैश्विक आघातों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों प्रकार का प्रभाव उपभोग और निवेश पर हो सकता है। ऐसे आघातों ने भारत में घरेलू उपभोग को निम्नलिखित तरीके से प्रभावित किया हो सकता है। पहला, वैश्विक आघातों की अनुक्रिया में इक्विटी मूल्यों में तीव्र सहसंबंध ने पारिवारिक धन के बड़े हिस्से का क्षय किया, जिसने बदले में उपभोग मांग को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया हो सकता है, क्योंकि पारिवारिक धन के क्षय का संबंध वर्ष 2008-09 के दौरान निजी अंतिम उपभोग मांग में तीव्र गिरावट के साथ था। दूसरा, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की विदेशी बाजारों में कम पहुँच ने उनकी घरेलू बाजार में उधार देने की क्षमता को घटाया, जिसमें परिवारों को ऋण देना शामिल था, जिसने बदले में उपभोग मांग को प्रभावित किया हो सकता है। तीसरा, व्यापार वित्त में संकुचन ने आघातों को और, इस प्रकार घरेलू उपभोग को, प्रभावित किया हो सकता है। चौथा, समुद्रपार उधार पर उच्चतर ऋण स्प्रेड बैंक ऋण के लिए मांग को बढ़ा देता है, जो बदले में बैंकों द्वारा ऋण की राशनिंग का कारण बनता है। संकट के दौरान बैंकों का झुकाव उपभोग प्रयोजनों के लिए ऋण को घटाने की ओर था, क्योंकि उनके जोखिम-बोध में महत्त्वपूर्ण रूप से परिवर्तन हुआ।

6.68 भारत में वित्तीय खुलेपन के साथ पूँजी प्रवाह की संरचना में उल्लेखनीय बदलाव सुधार की अवधि के बाद देखा गया। पूँजीगत खाता का क्रमिक उदारीकरण, ऋण से ऋणेतर प्रवाह पर जोर में बदलाव, वित्तीय बाजार विकास और तगड़ी वृद्धि संभावना ने भारत क ाट विदेशी निवेश प्रवाह का अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण गंतव्य स्थल बनाने में मदद की। तदनुसार, विदेशी निवेश-प्रवाह, जिसमें प्रत्यक्ष और संविभाग इक्विटी प्रवाह शामिल हैं, 1990 के दशक की सुधार अवधि में पूँजी प्रवाह के प्रधान स्रोत बन गये, जबकि 1970 और 1980 के दशकों की सुधार-पूर्व अवधि में पूँजी प्रवाह के स्रोत ऋण और बाह्य सहायता होते थे (चार्ट VI.11)। यद्यपि अधिक हाल की अवधि में ऋण प्रवाह का पुनरुत्थान देखा गया, 1970 और 1980 के दशक के विपरीत, जब ऋण प्रवाह अधिकतर आधिकारिक स्रोतों से होते थे, यह निजी ऋण प्रवाह से प्रेरित होता था, जो सामान्यत: पूँजीगत खाते के उदारीकरण के प्रभाव को और उधारदाता के भारतीय अर्थव्यवस्था में भरोसे के चलते कारपोरेटों द्वारा अनुभव की गयी ऋण की बेहतर शर्तों को प्रतिबिंबित करता है। भारत में पूँजी प्रवाह का एक अनोखा लक्षण यह था कि हाल के वैश्विक संकट के दौरान भी,

बॉक्स VI.7
भारत में विदेशी बचत और निवेश

पूँजी प्रवाह की संरचना में बदलाव ने विदेशी और देशी बचत के बीच बदलते कार्य-कारण संबंध के बीच विदेशी बचत की भूमिका को आलोकित किया। 1980 के दशक तक चालू खाता घाटा मुख्यत: सरकार के राजकोषीय घाटे को प्रतिबिंबित करता था, लेकिन सुधार-अवधि में लगभग पूरी तरह से देशी पारिवारिक बचत के माध्यम से रोजकोषीय घाटे और वित्तपोषण का संपीडन किये जाने के साथ ये दोनों घाटे विलुप्त हो गये (चार्ट)। क्रमिक रूप से खुले पूँजीगत खाते के साथ, चालू खाता अंतराल अब मुख्यत: निजी क्षेत्र अवशोषण को प्रतिबिंबित करता है। दूसरा, अब विदेशी बचत योजनाबद्ध तरीके से नहीं होती; वे अब बाजार के एजेंटों की पसंद को प्रतिबिंबित करती हैं, जो प्रवर्तक देशों के पुश फैक्टर और मेजबान देश के पुल फैक्टर द्वारा प्रेरित होती है। यह तर्क दिया जाता है कि निवेश को घरेलू बचत की उपलब्धता द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिए, और कि घरेलू बचत और निवेश के बीच न्यून सहसंबंध हो सकता है। यह सुनिश्चित स्थायी आय परिकल्पना पर आधारित है, जो उपभोग को सहज बनाने के लिए किसी खुली अर्थव्यवस्था में अंतरराष्ट्रीय बाजारों से लिये गये उधार में रूपांतरित होती है।

चार्ट : भारत में युगल घाटों में उतार-चढ़ाव

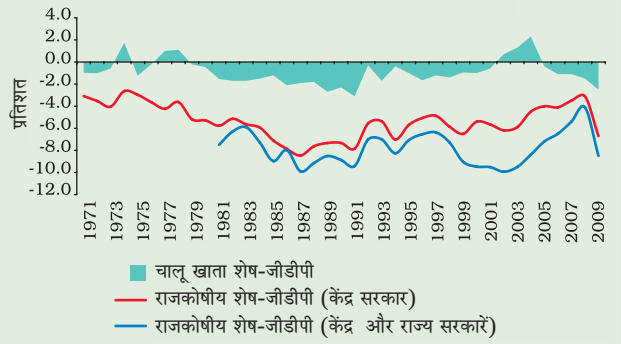

भारत के लिए बचत-निवेश संबंध के अनुभवमूलक विश्लेषण ने, जो घरेलू बचत दर (S), घरेलू पूँजी निर्माण दर (I) और चालू खाता शेष-जीडीपी अनुपात (सीएबी) के बीच ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण पर आधारित है, उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान की। इन परिणामों से व्युत्पन्न एक महत्त्वपूर्ण प्रेक्षण यह है कि सुधार-पूर्व अवधि (1951-1991) में निवेश (ΔI) सीएबी का कारण बना, जिसका तात्पर्य यह है कि योजना में बचत-निवेश अंतराल का वित्तपोषण करने के लिए अपनायी गयी रणनीति के अंतर्गत विशेष रूप से लक्ष्यित निवेश दर ने विदेशी बचत दर को अधिदिष्ट किया (सिंह, 2009)। यह एकदिशीय संबंध सुधार-अवधि (1992-2007) में उलट गया, जिसमें सीएबी ने ΔI को ग्रैंजर प्रभावित किया, जिसका तात्पर्य यह हुआ कि खुले चालू खाते और पूँजी प्रवाह के उदारीकरण के साथ विदेशी बचत भी निवेश दर को प्रेरित कर रही थी, क्योंकि इनमें से पहले का निर्धारण बाजार एजेंटों के निर्णय द्वारा किया जाता था।

पेयरवाइज ग्रैंजर कॉजेलिटी टेस्ट

नल्ल हाइपोथेसिस	एफ स्टैटिस्टिक	संभावना मूल्य
1951-1991		
ΔI सीएबी को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	8.44	0.00
सीएबी ΔI को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	2.01	0.15
1992-2007		
ΔI सीएबी को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	1.03	0.39
सीएबी ΔI को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	11.25	0.00

जब निधियों के अन्य स्रोत बंद हो गये थे, एफडीआई अंतर्वाह स्थिर गति से बने रहे, जिससे उनकी दीर्घावधि स्थिरता का महत्त्व समझ में आता है।

6.69 विदेशी निवेश अंतर्वाह की महत्त्वपूर्ण भूमिका घरेलू निवेश में इसके हिस्से से स्पष्ट थी। निवल देशी पूँजी निर्माण में एफडीआई प्रवाह का हिस्सा सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ा (चार्ट VI.11)।

चार्ट VI.11 : पूँजी प्रवाह और देशी पूँजी निर्माण

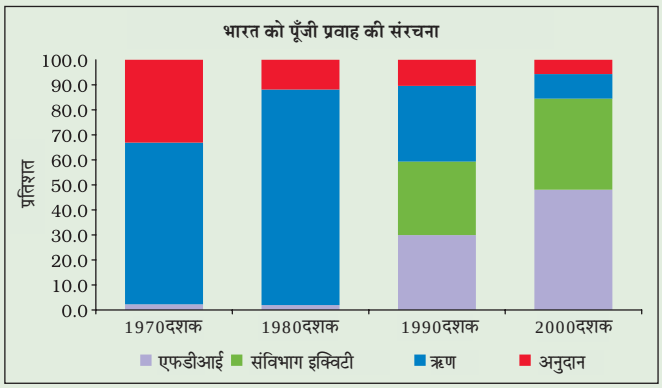

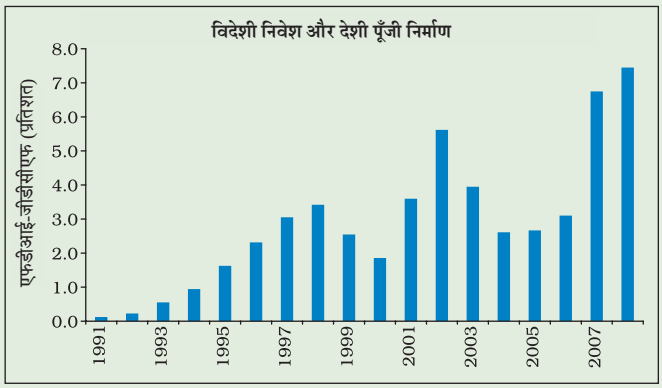

सारणी 6.31 : भारत : निवल पूँजी प्रवाह

(बिलियन अमरीकी डालर)

	2007-08				2008-09				2009-10		
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1. विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	2.8	2.3	2.1	8.6	9.0	4.9	0.4	3.2	6.1	6.5	3.9
आवक एफडीआई	7.6	4.8	7.8	14.3	11.9	8.8	6.3	8.0	8.7	10.7	7.1
जावक एफडीआई	4.7	2.6	5.8	5.7	2.9	3.9	5.9	4.8	2.6	4.2	3.9
2. संविभाग निवेश	7.5	10.9	12.7	-3.7	-4.2	-1.3	-5.8	-2.7	8.3	9.7	5.7
3. बाह्य सहायता	0.2	0.5	0.6	0.8	0.4	0.5	1.0	0.8	0.01	0.5	0.6
4. ईसीबी	6.9	4.2	6.2	5.2	1.5	1.7	3.8	1.0	-0.5	1.2	1.5
5. बैंकिंग पूँजी	-0.9	6.6	0.2	5.8	2.7	2.3	-5.0	-3.3	-3.4	4.4	1.9
एनआरआई जमाराशियाँ	-0.4	0.4	-0.9	1.1	0.8	0.3	1.0	2.2	1.8	1.0	0.6
6. अल्पावधि व्यापार ऋण	2.0	4.9	3.3	5.8	4.5	1.3	-4.8	-2.6	-1.5	-0.6	3.3
7. अन्य	-2.9	3.8	4.5	5.5	-8.9	-1.4	3.7	5.1	-3.2	0.9	-2.2
कुल (1 से 7)	**15.7**	**33.2**	**29.6**	**28.0**	**4.9**	**7.1**	**-6.1**	**1.4**	**5.9**	**22.6**	**14.7**

6.70 भारतीय अर्थव्यवस्था, अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई)[7] की तरह, द्रुत गति से विश्व अर्थव्यवस्था, विशेष रूप से उन्नत देशों के साथ 1990 के दशक और 2000 के दशक में बढ़ते वित्तीय प्रवाह के माध्यम से एकीकृत हो गयी। वर्ष 2007 के बाद वाले हिस्से में उन्नत देशों के वित्तीय बाजारों में हुई उथल-पुथल का प्रभाव भारत पर भी वित्तीय सरणी के माध्यम से हुआ, जो पूंजी प्रवाह, विशेष रूप से संविभाग निवेश में, गिरावट या प्रतिवर्तन के माध्यम से हुआ, बावजूद इसके कि यहाँ ठोस समष्टिआर्थिक मौलिक तत्व एवं बैंकिंग प्रणाली थे (सारणी 6.31)।

विदेशी निवेश

6.71 संकट के दौरान वैश्विक वित्तीय संस्थाओं ने, महत्त्वपूर्ण वैश्विक डिलिवरेजिंग के भाग के रूप में, भारत से महत्त्वपूर्ण संविभाग निवेश वापस ले लिये, जैसाकि उन्होंने वर्ष 2008-09 के दौरान अन्य ईएमई में किया था, बावजूद इसके कि यहाँ तगड़े समष्टिआर्थिक मौलिक तत्व विद्यमान थे। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों के स्थिर होते जाने और भारत में शीघ्र ही संकट से उबरने को प्रधान कारक मानते हुए संविभाग अंतर्वाह संकट के बाद फिर से होने लगा, जिसमें वर्ष 2009-10 के दौरान निवल अंतर्वाह हुआ (सारणी 6.32)।

6.72 दूसरी ओर, भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश चालू वैश्विक संकट से लगभग निरापद बना रहा। वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान एफडीआई अंतर्वाह में अनवरत उछाल ने भारतीय अर्थव्यवस्था के अपेक्षाकृत तगड़े समष्टिआर्थिक मौलिक तत्वों को और भारत की

सारणी 6.32 : भारत में विदेशी निवेश

(बिलियन अमरीकी डालर)

अवधि	संविभाग निवेश			एफडीआई (निवल)	
	अंतर्वाह	बहिर्वाह	निवल	आवक	जावक
1	2	3	4	5	6
2006-07:ति1	30.8	31.3	-0.5	3.4	-1.7
2006-07:ति2	17.9	15.8	2.1	4.4	-2.3
2006-07:ति3	28.6	25.1	3.6	9.8	-7.0
2006-07:ति4	32.2	30.4	1.8	5.1	-4.1
2007-08:ति1	34.7	27.2	7.5	7.5	-4.7
2007-08:ति2	48.7	37.8	10.9	4.7	-2.6
2007-08:ति3	78.1	63.3	14.8	7.9	-5.8
2007-08:ति4	74.2	78.0	-3.8	14.2	-5.7
2008-09:ति1	40.7	44.9	-4.2	11.9	-2.9
2008-09:ति2	42.6	43.9	-1.3	8.8	-3.9
2008-09:ति3	26.6	32.4	-5.8	6.3	-5.9
2008-09:ति4	18.6	21.2	-2.6	8.0	-4.8
2009-10:ति1	38.6	30.2	8.3	8.7	-2.6
2009-10:ति2	44.4	34.7	9.7	10.7	-4.2
2009-10:ति3	35.8	30.1	5.7	7.1	-3.2

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक।

[7] उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों द्वारा उभरती बाजार वित्तीय आस्तियों और सीमापार उधार, दोनों में विदेशी निजी संविभाग निवेश में हाल के संकट से पूर्व की अवधि में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई। इस प्रकार, ईएमई में सकल निजी पूँजी अंतर्वाह, वर्ष 2003 में उनके संयुक्त जीडीपी के 4 प्रतिशत से बढ़ कर वर्ष 2007 में 10.7 प्रतिशत हो गया, जबकि वर्ष 1992 और 1996 के बीच यह 4.7 प्रतिशत से बढ़ कर 5.7 प्रतिशत हो गया (बीआइएस, 2008/09)।

दीर्घावधि निवेश-गंतव्य-स्थल के रूप में मान्यता दिये जाने को प्रतिबिंबित किया। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में कुछ गिरावट के बावजूद एफडीआई अंतर्वाह आरोही वक्र पर आ गये और वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से निवेश में और अधिक तेजी आयी, जो समष्टिआर्थिक मौलिक तत्वों में भरोसे को दुहराता है।

6.73 यह जानना रोचक होगा कि निर्गामी एफडीआई भी हाल की अवधि के दौरान तगड़ा बना रहा, जिसका कारण था भारतीय फर्मों द्वारा अपने उत्पादन, विपणन एवं वितरण नेटवर्क समुद्रपार स्थापित करना, ताकि वे नयी प्रौद्योटगिकी और प्राकृतिक संसाधनों तक पहुँच प्राप्त करके वैश्विक पैमाने पर अपने लक्ष्य को हासिल कर सकें। भारतीय कारपोरेटों द्वारा किये गये समुद्रपार निवेश में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान काफी उछाल आया, बावजूद इसके कि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजार में उस समय टांसमान स्थिति थी। भारतीय कंपनियों, विशेष रूप से विनिर्माण क्षेत्र में, ने अपने समुद्रपार अभिग्रहणों का निधीयन वैश्विक ऋण बाजारों की बिगड़ती स्थिति की पृष्ठभूमि में घरेलू विदेशी मुद्रा बाजार से चलनिधि प्राप्त कर किया।

बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी)

6.74 कारपोरेटों द्वारा ईसीबी का आश्रय मुख्यत: पूँजीगत वस्तुओं के आयात, परियोजना वित्तपोषण और संयंत्र के आधुनिकीकरण एवं क्षमता-विस्तार के लिए लिया जाता है, जो देश में बढ़ते निवेश कार्यकलाप का संकेत होता है। भारतीय कारपोरेटों द्वारा वाणिज्यिक उधार में भी वर्ष 2008-09 की पहली छमाही से तेज गिरावट आयी है और, वर्ष के दौरान, भारत में सकल वाणिज्यिक उधार का संवितरण वर्ष 2007-08 में किये गये संवितरण का लगभग आधा हुआ। वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान वाणिज्यिक उधार के संवितरण में और कमी आयी, जबकि अदायगियाँ उतनी ही तगड़ी थीं, जितनी कि पूर्ववर्ती वर्ष में, जिसके परिणामस्वरूप निवल बहिर्वाह हुआ, अलबत्ता सीमांतिक रूप से। तथापि, भारतीय कारपोरेटों द्वारा जुटाये गये वाणिज्यिक उधारों में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में स्थिरता लौटने तथा देशी अर्थव्यवस्था में वृद्धि की बहाली होने के साथ वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही से उछाल आया।

6.75 एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह है कि ईसीबी और औद्योगिक कार्यकलापों के बीच सीधा संबंध नहीं होता, लेकिन परोक्ष संबंध पूंजीगत वस्तुओं के आयात के माध्यम से होता है। चूँकि ईसीबी का अधिकतर उपयोग पूँजीगत वस्तुओं (मशीनरी, उपकरण, आदि) के आयात का वित्तपोषण करने के लिए होता है, ताकि देशी निवेश मांग

चार्ट VI.12 : ईसीबी संवितरण एवं पूँजीगत वस्तुओं का आयात

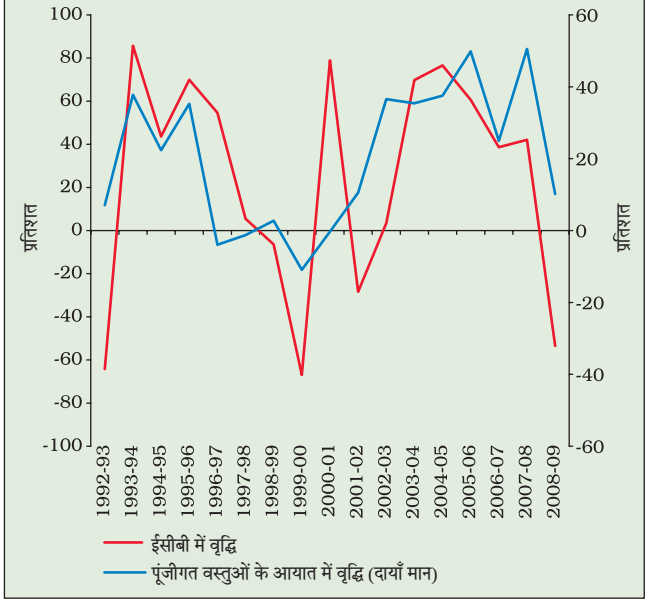

की पूर्ति की जा सके, पूँजीगत वस्तुओं का आयात वह वाहिका होती है, जिसके माध्यम से ऐसे आघातों का संचरण होता है। ईसीबी संवितरण और पूँजीगत वस्तुओं के आयात के बीच संबंध का विश्लेषण यह दर्शाता है कि इन दो वैरिएबलों के बीच निकट का सकारात्मक संबंध होता है (चार्ट VI.12)। इसकी पुष्टि वर्ष 1992-93 से ले कर 2008-09 की अवधि के दौरान वैरिएबलों के बीच उच्च अंश के सहसंबंध (0.55) द्वारा भी होती है। बदले में, पूंजीगत वस्तुओं का आयात औद्योगिक कार्यकलाप की गति पर निर्भर होता है। पूँजीगत वस्तुओं की आयात-वृद्धि औद्योगिक उत्पादन-वृद्धि में उतार-चढ़ाव पर निकट से नजर रखती है। आइआइपी वृद्धि और पूँजीगत वस्तुओं के आयात के बीच सहसंबंध गुणांक को अपेक्षाकृत ऊँचा (0.50) पाया गया है। इस प्रकार, वर्ष 2008-09 के दौरान भारतीय कारपोरेटों क समुद्रपार उधारों में संकुचन ने देशी निवेश कार्यकलाप को बाधित किया (चार्ट VI.12)।

व्यापार ऋण

6.76 अंतरराष्ट्रीय व्यापार ऋण की आपूर्ति भी एक प्रमुख सरणी है, जिसके माध्यम से वैश्विक आघात देशी निवेश और वास्तविक कार्यकलाप में संचरण करते हैं। मौद्रिक नियंत्रण बढ़ाने की अवधि के दौरान जो फर्में बैंक ऋण में कमी से बाध्य होती हैं, वे व्यापार ऋण का अधिकाधिक उपयोग करने का आश्रय लेती हैं। इसी प्रकार, जो फर्में

बैंक ऋण सहित वित्त के विविध स्रोतों तक सीमित पहुँच का अनुभव करती हैं, वे अपने आपूर्तिकर्ताओं को व्यापार ऋण उपलब्ध कराने के बारे में कह सकती हैं। व्यापार ऋण की व्यवस्था सामान्य रूप से अल्पावधि स्वरूप के होने और सम मूल्य पर द्रुत गति से मोचन किये जाने की सक्षमता के कारण किसी बैंक के लिए परिचालनीय रूप से सरलतम आस्ति-श्रेणी के रूप में मानी जाती है, जो बढ़ी हुई जोखिम विमुखता में कभी-कभी कटौती करती है, जो किसी बैंक के लिए संकट की अवधि के दौरान देशजन्य एक्सपोजर में समग्र कटौती की बैंक की नीति के हिस्से के रूप में परिपक्व होने वाले ऋणों का अक्सर पुनर्निर्धारण नहीं करती।

6.77 हाल के वैश्विक ऋण-संकुचन ने निर्यातकों और आयातकर्ताओं को व्यापार ऋण तक पहुँच प्राप्त करने और उसकी लागत की दृष्टि से प्रभावित किया। आईएमएफ (2009) के अनुसार, हाल के वैश्विक संकट के दौरान व्यापार वित्त पर स्प्रेड 100 से ले कर 150 आधार अंक बढ़ कर लिबोर के ऊपर लगभग 400 आधार अंक हो गया, जिसमें देश-जोखिम और काउंटरपार्टी जोखिमें तीव्र हो गयीं। यद्यपि व्यापार वित्त की लागत का बढ़ना वैश्विक था, व्यापार ऋण की उपलब्धता में कमी का अधिक अनुभव ईएमई, विशेष रूप से एशियाई ईएमई, द्वारा किया गया, जहाँ अंतर-क्षेत्रीय व्यापार का अधिक परिमाण न्यून-लाभ मार्जिन मद के रूप में होता है, जो उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को किये जाने वाले निर्यात के लिए विनिर्माण आपूर्ति शृंखला का हिस्सा होता है। विनियामकों और बैंकों द्वारा अपने स्वयं के उधार पर लगायी गयी उच्चतर पूँजी की शर्तों ने भी बैंकों की निधि-लागत और उनके ग्राहकों को दिये गये व्यापार वित्त के मूल्य के बीच स्प्रेड को बढ़ाया। इसके अतिरिक्त, चूक के भय/काउंटरपार्टी जोखिम के चलते बैंकों को उधार संबंधी दिशा-निर्देश को कड़ा करना पड़ा।

6.78 व्यापार ऋण में कमी के एक प्रमुख हिस्से ने न्यून व्यापार परिमाण और पण्य-मूल्य को प्रतिबिंबित किया, लेकिन इस कमी का कारण व्यापार-वित्त का द्वितीयक बाजार में उपलब्ध नहीं होना और उन बैंकों से ऋण-व्यवस्था में कमी होना माना जा सकता है, जो इस प्रकार का वित्त प्रदान करने में विशेषज्ञताप्राप्त होते हैं (बीआइएस,2008-09)। इस पृष्ठभूमि में, भारत को प्राप्त होने वाले अल्पावधि व्यापार ऋण में वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में गिरावट आयी, लेकिन दूसरी छमाही के दौरान यह गिरावट और तेज हो गयी। दूसरी ओर, भारतीय कारपोरेट विद्यमान व्यापार ऋण का पुनर्निर्धारण करने में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे और, इसीलिए, अल्पावधि ऋणों की अदायगी तेजी से बढ़ी, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में पूँजी का निवल बहिर्वाह हुआ (चार्ट VI.13)। इस प्रकार, भारत के अल्पावधि व्यापार ऋण के सकल संवितण में वर्ष 2008-09 में तेजी से गिरावट आयी; तथापि, अदायगियों में तेजी से

चार्ट VI.13 : वित्तीय सरणी के संकेतक

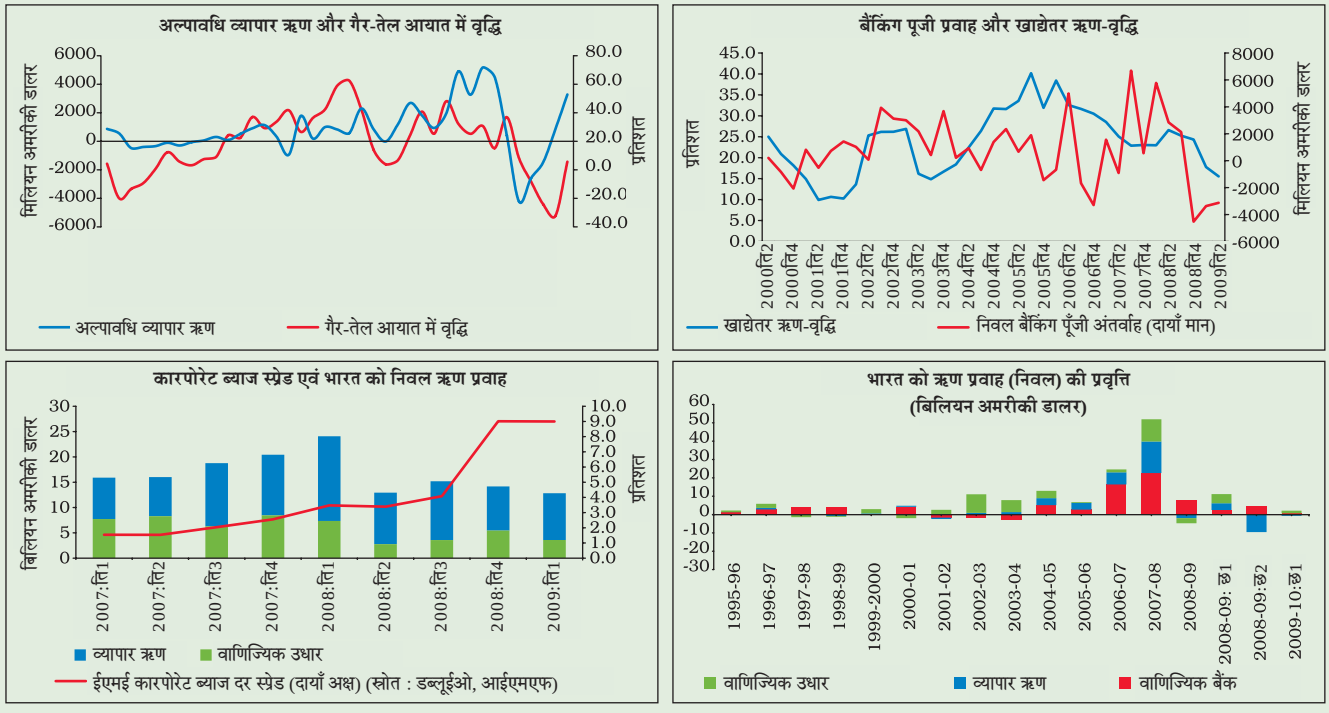

वृद्धि हुई, जिसका मुख्य कारण था पुनर्निर्धारण में समस्या उत्पन्न होना। स्थिर होते वैश्विक वित्तीय बाजारों और देश में वृद्धि में पुनरुत्थान होने के साथ व्यापार ऋण संवितरण में वर्ष 2009-10 के आरंभ से पुनरुत्थान हुआ और इसके परिणामस्वरूप 2009-10 की दूसरी तिमाही के दौरान और उसके बाद पूँजी का निवल अंतर्वाह हुआ।

6.79 वैश्विक रूप से, व्यापार वित्त की उपलब्धता में कमी को विश्व व्यापार में गिरावट के एक प्रमुख कारक के रूप में माना गया है। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान भारत में व्यापार ऋण के प्रवाह में कमी दिखने के बाद इस बात पर वाद-विवाद किया जाता था कि क्या अक्तूबर 2008 से भारत के आयात को विकृत करने में इसकी भूमिका थी। जनश्रुतिमूलक साक्ष्य यह बताता है कि व्यापार ऋण की लागत में द्रुत गति से बढ़ोतरी हुई है, जबकि इसके साथ-साथ उसकी उपलब्धता में काफी कमी आयी है, जैसाकि उच्चतर अदायगियों में प्रतिबिंबित होता है, लेकिन व्यापार ऋण में कुछ गिरावट का कारण मंदी के चलते आयात में कमी को माना जा सकता है, जबकि लागत में कुछ बढ़ोतरी दुनिया भर में निरंतर मांग अभावी मंदी की पृष्ठभूमि में बढ़ी हुई काउंटरपार्टी जोखिम के कारण हुई है।

6.80 व्यापार ऋण के संबंध में आयात के लोच का अनुमान लगाने के लिए एक अभ्यास करने का प्रयास अन्य नियंत्रक वैरिएबलों, यथा, औद्योगिक वृद्धि और विनिमय दर, के साथ करने का प्रयास किया गया, जिसमें वर्ष 1997-98 से लेकर 2008-09 तक की अवधि के तिमाही आँकड़े लिये गये थे और ऑर्डिनरी लीस्ट स्क्वेयर (ओएलएस) रिग्रेसन का उपयोग किया गया था। अनुमान के परिणामों से पता चलता है कि आयात की वृद्धि में व्यापार ऋण का योगदान सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण होता है [8]। तथापि, ये परिणाम यह दर्शाते हैं कि भारत में औद्योगिक वृद्धि आयात-वृद्धि में सबसे अधिक योगदान करने वाली रही है। इस प्रकार, अनुमान के परिणाम इस अटकल की पुष्टि करते हैं कि औद्योगिक मंदी के साथ व्यापार ऋण में संकुचन ने भारत में आयात-मांग को प्रभावित किया।

बैंकिंग पूँजी

6.81 भारतीय बैंकों की अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों तक पहुँच भी संकट के दौरान महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुई, जिसका कारण था वित्तीय क्षेत्र के प्रति जोखिम विमुखता और ईएमई की आस्तियों के पुनर्मूल्यनिर्धारण की महत्त्वपूर्ण जोखिम। अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजारों में बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए जोखिम चूक प्रीमियम अक्तूबर-नवंबर 2008 में शिखर पर पहुँच गये और काफी समय तक लेहमैन-घटना के पूर्व की स्थिति से उच्चतर स्तर पर बने रहे। वैश्विक आघातों के प्रभाव के अंतर्गत आते हुए भारतीय बैंकों ने बैंकिंग पूँजी में महत्त्वपूर्ण बहिर्वाह देखा। 2000 के दशक के आरंभ में और हाल के वैश्विक संकट के दौरान, बैंकिंग पूँजी अंतर्वाह ने प्रचक्रीय प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया है।

6.82 एनआरआइ जमाराशियों द्वारा प्रदान की गयी गुंजाइश के बावजूद, जो संकट के दौरान मुख्यत: आकर्षक ब्याज दर प्रोत्साहनों के चलते स्थिर बनी रहीं, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही और वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान बैंकिंग पूँजी के महत्त्वपूर्ण निवल बहिर्वाह के कारण मौजूदा देयताओं की चुकौतियाँ थीं और संभवत: उनके बिगड़ते तुलनपत्र के परिणामस्वरूप उनके समुद्रपार अनुषंगियों का पुन:पूँजीकरण किया जाना था। वाणिज्यिक बैंकों द्वारा देयताओं की चुकौती में अचानक हुई वृद्धि के लिए अंशत: उन कारकों को जिम्मेवार माना जा सकता है, जो पुनर्निर्धारण में योगदान करते थे। बैंकों के लिए अंतरराष्ट्रीय उधार तक पहुँच में आयी कमी ने अंशत: देशी बाजार में उधार देने की उनकी सामर्थ्य को बाधित किया।

समग्र संतुलन और विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि

6.83 वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में बिगड़ते व्यापार संतुलन के कारण विस्तारित चालू खाता शेष, जिसके साथ निवल पूजी बहिर्वाह जुड़ा है, संविभाग निवेश के प्रतिवर्तन और विशेष रूप से वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण और वाणिज्यिक बैंकों (एनआरआइ जमाराशियों को छोड़ कर) के ऋण प्रवाह के महत्त्वपूर्ण रूप से कम होने के परिणामस्वरूप हुआ और उसने समग्र शेष को वर्ष 2008-09 में घाटे में बदलने की अगुआई की। तथापि, वर्ष 2008-09 के दौरान बड़े पूँजी बहिर्वाह के कारण, प्रमुख मुद्राओं के विरुद्ध अमरीकी डालर के कमजोर पड़ने के परिणामस्वरूप मूल्यन में परिवर्तन ने वर्ष के दौरान आरक्षित निधियों के महत्त्वपूर्ण भाग (लगभग 65 प्रतिशत) की गिरावट को स्पष्ट किया (सारणी 6.33)।

[8] GM = 113.82 + 2.76 GIND + 0.09 GTC – 2.56 EXR + 0.67 AR(1)
(1.62) (2.39) (2.18) (-1.69) (5.48)
R^2 = 0.70 DW = 1.93
जहाँ GM = आयात में वृद्धि (अमरीकी डालर), GIND =औद्योगिक क्षेत्र में वृद्धि, GTC = व्यापार ऋण में वृद्धि, (अमरीकी डालर), और EXR = सांकेतिक विनिमय दर।

सारणी 6.33 : आरक्षित निधियों में परिवर्तन

(बिलियन अमरीकी डालर)

त्रैमासिक	आरक्षित निधि की स्थिति	आरक्षित निधि में परिवर्तन	विनिमय दरों के चलते मूल्यन	मूल्यन को छोड़कर आरक्षित निधि में परिवर्तन
1	2	3	4	5
त्रैमासिक				
2007-08:ति1	213.4	14.2	3.0	11.2
2007-08:ति2	247.8	34.4	5.2	29.2
2007-08:ति3	275.3	27.6	0.8	26.7
2007-08:ति4	309.7	34.4	9.4	25.0
2008-09:ति1	312.1	2.4	0.1	2.2
2008-09:ति2	286.3	-25.8	-21.0	-4.7
2008-09:ति3	256.0	-30.4	-12.5	-17.9
2008-09:ति4	252.0	-4.0	-4.3	0.3
2009-10:ति1	265.1	13.2	13.1	0.1
2009-10:ति2	281.3	16.2	6.8	9.4
2009-10:ति3	283.5	2.2	0.4	1.8
छमाही				
2007-08:छ1	247.8	48.6	8.1	40.4
2007-08:छ2	309.7	62.0	10.2	51.7
2008-09:छ1	286.3	-23.4	-20.9	-2.5
2008-09:छ2	252.0	-34.4	-16.8	-17.6
2009-10:छ1	281.3	29.3	19.8	9.5
2009-10:छ2	279.1	-2		
पूरा वर्ष				
2007-08	309.7	110.5	18.4	92.2
2008-09	252.0	-57.7	-37.7	-20.1
2009-10	279.1	27.1	–	–

6.84 समाहार करते हुए कहा जा सकता है कि इस संकट के दौरान वित्तीय सरणी का प्रभाव अधिक स्पष्ट था, जिसमें बैंकों के संविभाग अंतर्वाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण, और समुद्रपार उधार में तेज गिरावट देखने को मिली। तथापि, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और अनिवासी जमाराशियों में समुत्थान दिखाई पड़ा। भारतीय कारपोरेटों के समुद्रपार उधारों में तीव्र संकुचन ने देशी निवेश कार्यकलाप को महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। समुद्रपार चलनिधि के महँगे होने के कारण अनेक ईएमई के लिए व्यापार वित्त पर गंभीर प्रभाव पड़ा। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में कुछ अंश तक स्थिरता लौटने और अनेक उन्नत देशों में औद्योगिक क्षेत्र के संकट से उबरने के साथ कुछ सुधार इंद्रियगोचर हुए। भारत के भुगतान संतुलन (बीओपी) में बदलाव आया, जिसने मुख्यत: बढ़े हुए निजी धन-प्रेषण से ताकत हासिल की, जिसके साथ संविभाग निवेश में पुन: उछाल आना और वर्ष 2009-10 के दौरान एनआरआइ जमाराशियों के अंतर्वाह का बढ़ना जुड़ा था।

6.85 व्यापार और वित्त सरणी के माध्यम से अंतिम प्रभाव संपदा क्षेत्र में व्याप्त हुआ, जो संकट के दौरान गंभीर रूप से प्रभावित हुआ था। संपदा क्षेत्र पर अधिक प्रभाव होने का एक कारण था वर्तमान दशक के दौरान बाह्य क्षेत्र के प्रति सकल मांग की संरचना में बदलाव का आना (इस अध्याय का खंड I देखें)। भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलापन ने संचरण तंत्र को और भी प्रबल बना दिया, जिसके माध्यम से संकट का प्रभाव संपदा क्षेत्र पर पड़ा (अध्याय 5 का खंड I देखें)। बचत, निवेश और संपदा क्षेत्र पर अंतिम प्रभाव की चर्चा अगले खंड में की गयी है।

IV. बचत निवेश और वृद्धि पर प्रभाव

6.86 भारतीय अर्थव्यवस्था ने हाल के संकट के पूर्व बहुविध कारकों, यथा, सुधरी हुई वित्तीय मध्यस्थता, बढ़ी हुई बाह्य मांग, भौतिक आधारभूत संरचना की सबलता और सहायक सरकारी नीतियों के चलते वृद्धि-गति में सुस्पष्ट सबलता देखी थी। तथापि, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट और उसके परिणामस्वरूप प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था पर मांग और आपूर्ति, दोनों पक्षों की दृष्टि से हुआ, जिसमें भिन्न-भिन्न क्षेत्रों पर अलग-अलग प्रभाव हुआ। जबकि निर्यात में गिरावट मांग-पक्ष के संबंध में प्रमुख कारक हो सकता है, निधीयन के बाह्य स्रोतों का बंद होना, पूँजी प्रवाह में गिरावट और व्यवसाय-भरोसे में कमी, आपूर्ति पक्ष की बाध्यता हो सकती है। किस हद तक ये दो कारक वृद्धि, बचत और निवेश को प्रभावित करेंगे, इसका मूल्यांकन करना आवश्यक होगा, ताकि अर्थव्यवस्था के लिए उनके निहितार्थ को समझा जा सके।

बचत और निवेश पर प्रभाव

6.87 संचरण की वित्तीय सरणी, जिसने पूँजी प्रवाह, शेयर बाजारों, वित्तीय मध्यस्थता, आदि को प्रभावित किया था, अंशत: बचत और निवेश तक सीमित रह गयी। यह उल्लेखनीय है कि संकट की अवधि के दौरान वित्तीय बाजारों में अस्थिरता और अस्तव्यस्तता ने पारिवारिक बचत की संरचना का बदलाव भौतिक आस्तियों की ओर कर दिया हो सकता है। पूर्व के संकटों के दौरान, यथा, भुगतान संतुलन (बीओपी) संकट (1990-91), पूर्वी एशिया का संकट (1997-98) और अमेरिका में डॉट कॉम संकट (2001-2002), भारत ने अपनी वृद्धि-गति में कुछ गिरावट और सकल देशी बचत में सहवर्ती गिरावट का अनुभव किया था। हाल के वित्तीय संकट के दौरान इसी प्रकार की

सारणी 6.34 : सकल घरेलू बचत में अंशदान

अवधि	जीडीपी के % के रूप में				कुल बचत में आपेक्षिक अंशदान (%)		
	कुल	परिवार	निजी कारपोरेट	जनता	परिवार	निजी कारपोरेट	जनता
1	2	3	4	5	6	7	8
1991-1995	23.8	17.3	3.1	2.0	68.4	20.1	11.5
1996-2000	24.9	18.1	4.4	1.1	106.1	21.4	-27.5
2001-2005	26.4	22.7	4.5	-0.2	112.9	6.1	-19.0
2005-06	34.1	22.8	8.2	3.1	56.8	35.6	7.6
2006-07	34.4	22.9	8.0	3.6	48.8	26.0	25.2
2007-08	36.4	22.6	8.7	5.0	42.9	27.4	29.8
2008-09	32.5	22.6	8.4	1.4	1394.9	382.2	-1677.1

घटना देखी गयी, क्योंकि सकल देशी बचत की वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान तेज गिरावट हुई, जो अर्थव्यवस्था में वृद्धि की गति मंद होने को प्रतिबिंबित करती है (सारणी 6.34)। अंतरराष्ट्रीय संकटों के परिणामस्वरूप पिछली प्रवृत्तियों से अनुमान लगाते हुए कहा जा सकता है कि आने वाले वर्षों में सकल देशी बचत में उछाल हो सकता है।

6.88 पुन:, भारत में पारिवारिक बचत में उतार-चढ़ाव के पीछे प्रमुख कारकों का पता लगाने का प्रयास किया गया है, ताकि हाल के वैश्विक संकट और आने वाले वर्षों के दौरान के घटनाक्रमों का मूल्यांकन किया जा सके। पारिवारिक बचत को विविध स्वतंत्र वैरिएबलों, यथा, वैयक्तिक प्रयोज्य आय, ब्याज दर (सरकारी प्रतिभूतियों पर आय), वित्तीय संकट गहराना (एम3/जीडीपी) और वर्ष 1970-71 से 2008-09 के दौरान राजकोषीय घाटा, पर रिग्रेस किया गया। रिग्रेसन के परिणाम दर्शाते हैं कि वैयक्तिक प्रयोज्य आय और वित्तीय संकट गहराने के गुणांक धनात्मक और महत्त्वपूर्ण हैं, जबकि ब्याज दर और राजकोषीय घाटे के गुणांक धनात्मक, लेकिन उपेक्षणीय हैं[9]। रिग्रेसन के परिणाम भारत के मामले में रिकार्डियन इक्विवैलेंस (आरई) हाइपोथेसिस[10] का विरोध करते हैं, क्योंकि राजकोषीय घाटे के बारे में यह नहीं पाया गया कि वह पारिवारिक बचत में किसी महत्त्वपूर्ण उतार-चढ़ाव का कारण नहीं बनता है। एक अध्ययन में घटक और सुब्रत (1996) ने भी भारत में आरई परिकल्पना को अमान्य पाया। फिर भी, बचत, विशेष रूप से परिवारों में और निजी क्षेत्रों में अन्य कारकों के कारण संकट-पश्चात् अवधि के दौरान बढ़ सकती है, यथा, संभवत: इसलिए कि भविष्य में इस प्रकार की घटना होने पर कुछ गुंजाइश बन सके और संकट के दौरान आयी देयताओं की चुकौती की जा सके।

6.89 वैश्विक वित्तीय संकट ने कंपनियों को आंतरिक और बाह्य, दोनों प्रकार के वित्तीय स्रोतों तक कम पहुँच होने के चलते उनकी निवेश की क्षमता को दुर्बल बनाया, जिसके साथ लड़खड़ायी वृद्धि संभावना और बढ़ी हुई अनिश्चितता जुड़ी थी, जिसके चलते निजी क्षेत्र की निवेश करने की प्रवृत्ति गंभीर रूप से प्रभावित हुई। इन सभी कारकों ने वर्ष 2008-09 के दौरान अर्थव्यवस्था में निजी निवेश में बोधगम्य संकुचन की अगुआई की। यह नोट किया जा सकता है कि निजी निवेश की प्रवृत्ति विगत दो अंतरराष्ट्रीय संकटों, अर्थात्, पूर्वी

[9] LHHSt = -1.5528 + 0.5426 *LPDIt + 0.0124*LFISDt-1 + 0.0012*RINTt + 0.0052*LFINDt + 0.4884*LHHSt-1
(-2.6497) (3.2955) (0.2702) (0.5001) (1.5880) (3.4054)

R2 = 0.9981, DW= 2.0771
LHHS= परिवार की बचत का लॉग
LPDI= वैयक्तिक प्रयोज्य आय का लॉग
LFISD= राजकोषीय घाटे का लॉग
RINT= वास्तविक विनिमय दर (सरल औसत जमाराशि ब्याज दर)
LFID= वित्तीय गहनता (एम3/जीडीपी)

[10] रिकार्डियन इक्विवैलेंस हाइपोथेसिस में माना गया है कि सरकारी व्यय, जिसका निधीयन उधार के माध्यम से किया गया हो, का आंतरीकरण समझदार उपभोक्ताओं द्वारा उनके उपभोग की प्रवृत्ति से किया जायेगा, जिसके कारण बचत अधिक होगी, ताकि भविष्य में सरकार को इन उधारों की चुकौती किये जाने के लिए अधिक करों का भुगतान किया जा सके।

एशिया संकट और डॉट कॉम संकट, के दौरान एकसमान थी, जब पहले वाले संकट में निजी निवेश में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी और दूसरे वाले संकट में समग्र निवेश में संकुचन हुआ। इन संकटों के दौरान परिवार और सरकारी क्षेत्र में निवेश-वृद्धि में भी काफी गिरावट दर्ज की गयी। अतएव, अन्य क्षेत्रों द्वारा समर्थित निजी निवेश ने विगत संकटों के दौरान सकल देशी पूँजी निर्माण की वृद्धि में तेज गिरावट की अगुआई की। चूँकि सरकार ने हाल के संकट के दौरान प्रति-चक्रीय उपाय के रूप में आधारभूत संरचना क्षेत्र में व्यय में बढ़ोतरी की है, अत: वृद्धिशील सरकारी निवेश की गति में तेज गिरावट नहीं देखी गयी है। इसके साथ ही, परिवारों के निवेश में वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से वृद्धि हुई। चूँकि पिछले कुछ वर्षों के दौरान सकल देशी पूँजी निर्माण को निजी निवेश से ऊर्जान्वित किया जाता था, अत: निजी निवेश में घोर संकुचन के कारण हाल के संकट के दौरान इसकी वृद्धि में तेज गिरावट आयी (सारणी 6.35)।

6.90 सकल देशी पूँजी निर्माण को प्रेरित करने के लिए निजी निवेश के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए उन कारकों का विश्लेषण किया गया, जो निजी निवेश की गति को प्रेरित करते हैं। निजी निवेश को प्रेरित करने वाले संभावित कारक आपूर्ति पक्ष से बैंक ऋण, निवल पूँजी प्रवाह तथा ब्याज दर हो सकते हैं और मांग पक्ष से वैयक्तिक प्रयोज्य आय हो सकती है। इन सभी वैरिएबलों का परीक्षण उनकी अचलता के लिए किया गया और उन्हें आइ(1) के क्रम में पाया गया। चूँकि इन सभी वैरिएबलों की, सरल वीएआर के बदले, एक इकाई मूल समस्या थी, अत: चुनिंदा व्याख्यात्मक वैरिएबलों[11] की एक इकाई मूल समस्या थी, अत: निजी निवेश के अंतर-विघटन का अनुमान लगाने के लिए सरल वीएआर के बदले जोहान्सेन को-इंटेग्रेशन (1988, 1991) कार्यप्रणाली का उपयोग किया गया। चोलेस्की वैरिएंस डिकंपोजिशन बताता है कि बैंक ऋण निजी निवेश में लगभग 28 प्रतिशत घट-बढ़ को स्पष्ट करता है, जबकि प्रयोज्य आय और ब्याज दर क्रमश: लगभग 8 प्रतिशत और 5 प्रतिशत घट-बढ़ को स्पष्ट करते हैं। तथापि, निवल पूँजी प्रवाह निजी निवेश में नगण्य घट-बड़ को स्पष्ट करता है। तथापि, बैंक ऋण द्वारा स्पष्ट किये गये निजी निवेश में घट-बढ़ की सीमा कालक्रम में बढ़ती है, जबकि वैयक्तिक प्रयोज्य आय के मामले में इसमें गिरावट आयी। पुन:, वीएआर ग्रैंजर

सारणी 6.35 : वर्तमान कीमतों पर सकल देशी पूँजी निर्माण

वर्ष/अवधि	वृद्धि (प्रतिशत)				जीडीपी में हिस्सा (प्रतिशत)			
	परिवार	प्राइवेट	जनता	कुल	परिवार	प्राइवेट	जनता	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1990-1991	23.2	20.6	14.4	18.9	9.7	4.5	10.0	24.2
1991-1992	**-24.9**	**58.1**	**9.1**	**4.6**	**6.3**	**6.2**	**9.5**	**22.0**
1992-1996	24.7	34.3	12.3	22.4	7.2	7.7	8.9	23.8
1996-1999	**19.9**	**0.3**	**8.0**	**8.2**	**7.4**	**8.3**	**7.2**	**22.9**
1999-2000	37.8	15.6	17.7	28.5	10.5	7.4	7.4	26.1
2000-2002	**11.7**	**-5.3**	**4.1**	**1.4**	**11.3**	**5.3**	**6.9**	**24.2**
2002-2003	20.8	17.7	-4.6	12.3	12.6	5.9	6.1	25.2
2003-2004	13.2	29.4	16.9	19.3	12.7	6.8	6.3	26.8
2004-2005	13.8	79.9	24.3	34.9	13.5	10.3	7.4	32.5
2005-2006	0.0	50.1	21.8	20.9	11.8	13.5	7.9	34.3
2006-2007	16.8	24.5	22.7	21.3	11.9	14.5	8.4	36.0
2007-2008	11.0	28.1	22.9	20.6	11.5	16.1	8.9	37.6
2008-2009	19.8	-11.0	18.6	6.7	12.2	12.7	9.4	35.6

स्रोत : हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी।

टिप्पणी : सकल देशी पूँजी निर्माण में वृद्धि वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही के दौरान 4.7 प्रतिशत थी।

[11] सहसंबंध गुणांक का क्रम 1 पाया गया है, जिसका तात्पर्य यह है कि उनमें केवल एक सह-एकीकरण संबंध है। विविध अंतराल चयन मानदंडों ने केवल एक अंतराल सूचित किया।

कारणत्व परीक्षण के परिणाम[12] यह दर्शाते हैं कि एकदेशीय कारणत्व बैंक ऋण से निजी निवेश की ओर 10 प्रतिशत महत्त्व स्तर पर चलता है और वह वैयक्तिक प्रयोज्य आय से निजी निवेश की ओर महत्त्व के 1 प्रतिशत स्तर पर द्विदिशात्मक होता है। ब्याज दरों और निवल पूँजी प्रवाह से निजी निवेश और निजी निवेश से ब्याज दरों और निवल पूँजी प्रवाह तक कारणत्व को महत्त्वपूर्ण नहीं पाया गया है। उपर्युक्त अनुभवमूलक परिणाम एक जैसे निजी प्रयोज्य आय और बैंक ऋण के निजी निवेश को प्रभावित करने के महत्त्व का प्रदर्शन करते हैं। वर्तमान संदर्भ में भी अधिक मंदी की पृष्ठभूमि में ये दोनों कारक निजी निवेश में महत्त्वपूर्ण गिरावट को प्रेरित करते प्रतीत होते हैं, जिससे अंतत: वर्ष 2008-09 में सकल देशी पूँजी निर्माण की वृद्धि में तेज गिरावट आयी।

समग्र वृद्धि पर प्रभाव

6.91 यद्यपि भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही से गिरावट आनी शुरू हो गयी और वैश्विक वृद्धि से संकेत ग्रहण करते हुए बाद की तिमाहियों में गिरावट बनी रही, फिर भी वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से इसमें कुछ सुधार होने के पूर्व वर्ष 2008-09 की तीसरी और चौथी तिमाही में गिरावट बढ़ गयी (सारणी (6.36)। वास्तव में, भारतीय अर्थव्यवस्था पहले ही वर्ष 2006 की चौथी तिमाही से व्यवसाय चक्र के नरम वृद्धि के प्रक्षेप-पथ पर थी, लेकिन वर्तमान वैश्विक संकट ने इस गिरावट को वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से अधिक घोषित कर दिया (आरबीआई की वार्षिक रिपोर्ट, 2008-09)[13]। अत: भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्विक वित्तीय संकट के नहीं होने पर भी वर्ष 2008-09 के दौरान गिरावट देखी गयी होती, *अलबत्ता* धीमी गति से।

6.92 जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, भारतीय अर्थव्यवस्था में गिरावट के आरंभिक संकेत वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही में दिखे, लेकिन वास्तविक प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में महसूस किया गया। मांग पक्ष में, वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति पहले प्रतिक्रिया करने वाले थे निवेश (पूँजी निर्माण) और निजी उपभोग, क्योंकि इन दोनों की वृद्धि में सहवर्ती रूप से गिरावट वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही से आने लगी। वस्तु और सेवाओं के निर्यात पर प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में हुआ और उनकी वृद्धि में अचानक तेजी से गिरावट उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के खर्च में बड़ी गिरावट के कारण हुई (चार्ट VI.14)।

सारणी 6.36 : उपादान लागत पर जीडीपी में त्रैमासिक वृद्धि

(प्रतिशत)

क्षेत्र	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08				2008-09				2009-10			
				ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
कृषि एवं संबद्ध	4.7	1.6	0.2	3.1	3.9	8.7	2.1	3.2	2.4	-1.4	3.3	1.9	0.9	-1.8	0.7
उद्योग	9.3	3.1	10.4	10.5	9.5	9.5	7.8	5.2	4.9	1.7	0.8	4.6	9.0	12.3	15.1
सेवा	10.4	9.3	8.3	10.7	10.5	10.2	10.4	9.8	9.3	10.0	8.0	7.5	10.0	7.3	8.5
कुल	**9.2**	**6.7**	**7.4**	**9.3**	**9.4**	**9.7**	**8.5**	**7.8**	**7.5**	**6.1**	**5.8**	**6.0**	**8.6**	**6.5**	**8.6**

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार।

[12] **वीएआर ग्रैंजर कारणत्व/ब्लॉक एक्सोजेनिटी वॉल्ड परीक्षण**

नल्ल हाइपोथेसिस	चाइ स्क्वेयर स्टैटिस्टिक्स	स्वीकार/अस्वीकार करें (एक्स के कारण वाइ नहीं होता)
बैंक ऋण निजी निवेश का कारण नहीं बनता	3.06 (0.10)	अस्वीकार करें
निवल पूँजी प्रवाह निजी निवेश का कारण नहीं बनता	1.33 (0.25)	स्वीकार करें
वैयक्तिक प्रयोज्य आय निजी निवेश का कारण नहीं बनती	18.26 (0.00)	अस्वीकार करें
ब्याज दर निजी निवेश का कारण नहीं बनती	0.45 (0.50)	स्वीकार करें

[13] वर्तमान व्यवसाय-चक्र के दौरान, विस्तारक चरण लगभग 8 से 9 तिमाहियों तक बना रहा, जिसकी शुरुआत वर्ष 2004(ति4) से हुई और यह 10 प्रतिशत के निकट अपने शीर्ष पर वर्ष 2006 की दूसरी और तीसरी तिमाही में पहुँचा। उसके बाद अंतर्निहित वृद्धि की गति में कुछ नरमी वर्ष 2008-09(ति4) तक दिखाई पड़ी।

चार्ट VI.14 : मांग-पक्ष घटकों में त्रैमासिक वृद्धि की प्रवृत्ति

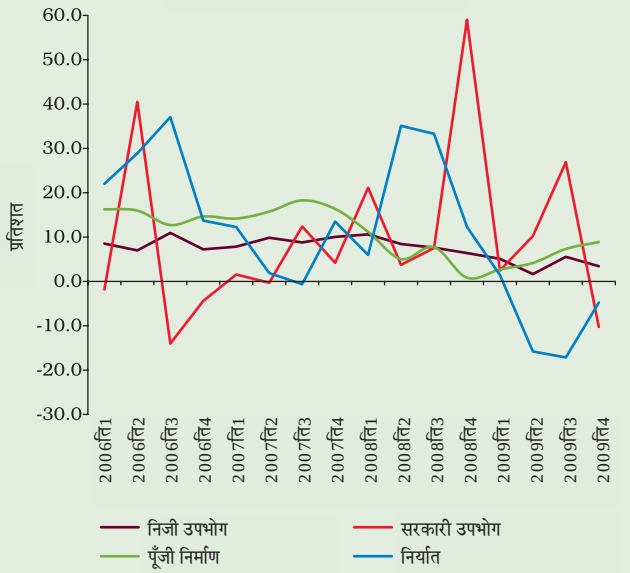

6.93 जीडीपी और निजी उपभोग तथा सकल देशी पूँजी निर्माण (निवेश) के बीच धनात्मक सह-गमन हाल की अवधि (2006-2009) में और अधिक सुदृढ़ हुआ (सारणी 6.37)। जीडीपी और सरकारी उपभोग के बीच चक्रीय सहगमन विगत अतीत में ऋणात्मक हो गया, जो प्रमुख रूप से वैश्विक संकट के परिणामस्वरूप दुर्बल होती वृद्धि को सहारा देने के लिए प्रेरक उपायों के रूप में निष्पादित प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति-दृष्टिकोण का परिणाम था। जीडीपी वृद्धि और सकल मांग के विविध घटकों के बीच वर्ष 1996 की दूसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक के लिए वैरिएबलों के बीच संबंध का अनुमान ऑर्डिनरी लीस्ट स्क्वेयर (ओएलएस) रिग्रेसन के साथ किया गया। रिग्रेसन के परिणाम दर्शाते हैं कि चक्रीय सकल घरेलू पूँजी निर्माण और निजी उपभोग से चक्रीय जीडीपी तक जाने वाला कारणत्व महत्त्वपूर्ण है, जबकि यह सरकारी उपभोग और वस्तु

सारणी 6.37 : समग्र मांग के घटकों के साथ जीडीपी का चक्रीय सहगमन
(सहसंबंध गुणांक)

घटक	1996-2000	2001-2005	2006-2009:Q2
1	2	3	4
सकल देशी पूँजी निर्माण	0.67	0.44	0.64
निजी उपभोग	0.00	0.50	0.60
सरकारी उपभोग	0.42	0.16	-0.72
वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात	-0.01	0.14	0.32

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, सीएसओ, भारत सरकार।

एवं सेवाओं के निर्यात के मामले में उपेक्षणीय है[14]। यह हाल की अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था को प्रेरित करने में निजी वित्तीय उपभोग और निवेश की प्रमुखता बताता है। अत: यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था में चक्रीय गिरावट को बढ़ाया, जिसके चलते निजी उपभोग और निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

6.94 जीडीपी में बाजार मूल्य पर वास्तविक वृद्धि में, जो वर्ष 2005-2008 के दौरान उच्चतर प्रक्षेप-पथ पर आरूढ़ थी, वैश्विक संकट की पृष्ठभूमि में वर्ष 2008-09 की पहली छमाही से गिरावट आरंभ हो गयी, जिसने इस अवधि के दौरान निवेश और निजी उपभोग पर प्रतिकूल प्रभाव डाला (सारणी 6.38)। वस्तु और सेवाओं के निर्यात में वृद्धि, जिसमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में महत्त्वपूर्ण रूप से उछाल आया था, में दूसरी छमाही में तेज गिरावट आयी। इसी प्रकार, निजी उपभोग में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट जारी रही, जिसका कारण था शेयर बाजार में निरंतर गिरावट और बढ़ी हुई अनिश्चितता। इसके साथ-साथ सरकारी उपभोग में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में भारी वृद्धि हुई, क्योंकि सरकार ने प्रतिचक्रीय उपाय किये। घटकवार (मांग पक्ष) विश्लेषण यह दर्शाता

[14] CGGDP = 4.97 + 0.12 CGPFCF - 0.02 CGGFCE + 0.28 CGGDCF + 0.0001 CGNX
(2.38) (1.77) (-1.08) (4.92) (0.25)
R^2 = 0.41 DW = 1.65
CGGDP = सकल देशी उत्पाद में चक्रीय वृद्धि
CGGDCF = सकल देशी पूँजी निर्माण में चक्रीय वृद्धि
CGGFCE = सरकारी अंतिम उपभोग व्यय में चक्रीय वृद्धि
CGPFCE = निजी अंतिम उपभोग व्यय में चक्रीय वृद्धि
CGNX = वस्तुओं और सेवाओं के निवल निर्यात में चक्रीय वृद्धि

सारणी 6.38 : जीडीपी के मांग-घटकों में वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

अवधि	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	पूँजी निर्माण	निर्यात	आयात	समग्र जीडीपी (बाजार कीमतें)
1	2	3	4	5	6	7
प्रवृत्ति						
1990-95	3.7	2.8	7.8	10.8	13.3	4.7
1995-00	5.9	9.8	8.0	13.4	13.3	6.6
2000-05	4.6	1.8	10.0	16.1	11.1	5.9
2005-08	9.0	7.2	15.3	17.6	21.5	9.5
वार्षिक						
2007-08	9.8	9.7	16.9	5.2	10.0	9.6
2008-09	6.8	16.7	-1.7	19.3	23.0	5.1
2009-10	4.3	10.5	7.1	-6.7	-7.3	7.7
छमाही						
2007-08:छ1	9.3	5.2	16.2	0.6	1.2	9.6
2007-08:छ2	10.3	13.5	13.5	9.4	18.7	9.6
2008-09:छ1	8.0	5.5	0.9	34.2	40.0	7.1
2008-09:छ2	5.8	25.7	-3.9	6.6	8.6	3.4
2009-10:छ1	4.6	22.5	0.9	-15.9	-9.5	5.8
2009-10:छ2	4.0	2.3	13.0	3.3	-4.8	9.3
त्रैमासिक						
2008-09:ति1	8.4	3.7	0.1	35.1	34.4	7.3
2008-09:ति2	7.6	7.5	1.6	33.3	45.2	6.9
2008-09:ति3	6.4	59.0	-4.9	12.3	23.2	3.0
2008-09:ति4	5.1	2.5	-2.9	1.4	-4.4	3.8
2009-10:ति1	2.9	15.3	-0.3	-16.0	-8.5	5.2
2009-10:ति2	6.4	30.5	2.1	-15.8	-10.5	6.4
2009-10:ति3	5.3	2.5	8.4	-7.5	-5.8	7.3
2009-10:ति4	2.6	2.1	17.3	14.2	-3.7	11.2

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार।

है कि वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान वृद्धि में सुधार सकल देशी पूँजी निर्माण में सुधार के कारण हुआ, जिसका समर्थन सरकारी उपभोग में तगड़ी वृद्धि द्वारा किया गया था। अन्य सभी मांग-घटक, यथा, निजी उपभोग, निर्यात और आयात, जो वृद्धि में सीधे योगदान करते हैं, में इस अवधि के दौरान वृद्धि में गिरावट/संकुचन होना दिखाई पड़ता रहा।

गिरावट का क्षेत्रीय प्रभाव

6.95 औद्योगिक वृद्धि में, जो पिछले तीन वर्षों से उच्च स्तर पर बनी रही थी, वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जिसका कारण था व्यापार एवं वित्तीय सरणियों के माध्यम से वैश्विक संकट का स्पिलओवर प्रभाव होना। औद्योगिक वृद्धि में गिरावट समग्र वृद्धि में गिरावट से ऊँची थी और, तदनुसार, जीडीपी में औद्योगिक क्षेत्र के योगदान में भी वर्ष 2008-09 के दौरान काफी कमी आयी। दूसरी ओर, उद्योग की तुलना में सेवा-क्षेत्र में वर्ष 2008-09 के दौरान संयत गिरावट दिखाई पड़ी और जीडीपी में इसके आपेक्षिक योगदान में सुधार हुआ (सारणी 6.39)। इस अवधि के दौरान सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में नरमी वित्तीय सरणी से उद्भूत और बाह्य मांग के बंद हो जाने से हुई थी।

6.96 वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में औद्योगिक और सेवा-क्षेत्र पर संकट का प्रभाव बढ़ गया, जिसमें वणिक माल निर्यात में समग्र संकुचन हुआ और सेवा-क्षेत्र की निर्यात-वृद्धि में गिरावट के साथ भरोसे में कमी आई जिसने वित्तीय सरणी से न:सृत प्रतिकूल प्रभावों को प्रबल किया। पुन:, इस अवधि के दौरान सेवा-क्षेत्र की तुलना में औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में गिरावट अधिक गंभीर थी, क्योंकि विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात, जो अपना बड़ा हिस्सा औद्योगिक क्षेत्र

सारणी 6.39 : जीडीपी में क्षेत्रीय वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

अवधि	वृद्धिशील जीडीपी में अंशदान			वृद्धि			
अवधि	कृषि	उद्योग	सेवाएँ	कृषि	उद्योग	सेवाएँ	समग्र
1	2	3	4	5	6	7	8
प्रवृत्ति							
1990-95	11.8	17.2	71.0	3.4	5.3	5.6	4.8
1995-00	10.0	17.9	72.1	3.1	6.0	8.6	6.6
2000-05	2.9	21.5	75.6	1.8	6.0	7.8	6.0
2006-08	8.7	22.0	69.3	4.6	10.3	10.6	9.5
वार्षिक							
2007-08	8.8	20.8	70.4	4.7	9.3	10.4	9.2
2008-09	3.9	9.5	86.6	1.6	3.1	9.3	6.7
2009-10	0.5	27.9	71.7	0.2	10.4	8.3	7.4
छमाही							
2007-08:छ1	5.8	22.5	71.7	3.5	10.0	10.6	9.4
2007-08:छ2	11.5	19.3	69.2	5.7	8.7	10.3	9.1
2008-09:छ1	5.5	14.2	80.3	2.9	5.1	9.6	7.6
2008-09:छ2	2.0	4.2	93.7	0.7	1.2	9.0	5.9
2009-10:छ1	2.7	19.4	77.9	1.4	6.8	8.7	7.3
2009-10:छ2	-1.5	35.1	66.4	-0.7	13.8	7.9	7.6
त्रैमासिक							
2008-09:ति1	6.7	14.2	79.1	3.2	5.2	9.8	7.8
2008-09:ति2	4.3	14.2	81.5	2.4	4.9	9.3	7.5
2008-09:ति3	-4.6	5.7	98.9	-1.4	1.7	10.0	6.1
2008-09:ति4	8.9	2.8	88.3	3.3	0.8	8.0	5.8
2009-10:ति1	4.8	15.6	79.6	1.9	4.6	7.5	6.0
2009-10:ति2	1.3	22.0	76.7	0.9	9.0	10.0	8.6
2009-10:ति3	-5.1	35.9	69.2	-1.8	12.3	7.3	6.5
2009-10:ति4	1.2	34.6	64.2	0.7	15.1	8.5	8.6

की मांग में योगदान करते हैं, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं पर किये जाने वाले व्यय में तीव्र गिरावट की पृष्ठभूमि में तेजी से संकुचित हुए। तथापि, यह उल्लेखनीय है कि सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में वर्ष 2009-10 के दौरान गिरावट जारी रही, जबकि औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में महत्त्वपूर्ण रूप से पुनरुत्थान हुआ।

6.97 कृषि और संबद्ध कार्यकलाप, जिनका अधिकतर संबंध वैश्विक गतिविधियों से नहीं होता, तगड़े मानसून के चलते यथेष्ट दर पर बढ़े और वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान ग्रामीण मांग के रूप में उद्योग और सेवाओं को समर्थन देते रहे। तथापि, कृषि और संबद्ध कार्यकलापों में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी और, तदनुसार, ग्रामीण मांग घटक वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में दुर्बल हुआ। वर्ष 2009 में दक्षिण-पश्चिम मानसून की विफलता और उसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में कमी होने से वर्ष 2009-10 के दौरान ग्रामीण मांग दुर्बल हुई प्रतीत होती है।

उद्योग : भिन्न-भिन्न किस्म के विश्लेषण

6.98 विभिन्न देशों में किये गये विश्लेषण से प्रकट होता है कि औद्योगिक क्षेत्र पर संकट का प्रभाव काफी गंभीर और व्यापक रहा है, जैसाकि वर्ष 2008 और 2009 के दौरान भारत सहित अनेक उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि में तीव्र गिरावट या संकुचन से स्पष्ट होता है (सारणी 6.40)। यद्यपि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का औद्योगिक क्षेत्र पहले संकट से प्रभावित हुआ, फिर भी कुछ अंतराल के साथ इसका थोड़ा-थोड़ा प्रभाव उभरते बाजारों और अन्य विकासशील देशों पर व्यापार एवं वित्तीय सरणियों के माध्यम से पड़ा।

सारणी 6.40 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक वृद्धि

(प्रतिशत)

देश	2007				2008				2009				2010
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
						उभरती							
ब्राजील	3.8	5.6	6.3	7.9	6.9	5.9	6.3	-7.2	-13.8	-11.6	-8.7	6.3	17.2
चीन	15.1	18.3	18.1	17.5	10.9	15.9	13.0	6.4	9.7	9.0	12.3	17.9	-
भारत	10.3	8.7	8.3	7.0	5.3	4.7	0.8	0.5	3.8	9.0	13.4	15.1	12.9
कोरिया	4.1	6.3	6.1	10.9	11.2	9.2	5.9	-10.9	-15.7	-6.1	4.3	16.1	25.6
मलेशिया	0.6	1.8	2.1	4.5	6.6	2.4	0.1	-9.1	-14.4	-10.9	-6.6	2.6	-
मेक्सिको	2.5	1.5	2.1	1.8	0.4	1.3	-1.4	-2.6	-9.6	-11.1	-6.3	-2.0	5.2
						उन्नत							
कनाडा	-1.6	0.1	0.2	0.0	-5.0	-4.6	-4.3	-7.2	-10.6	-14.5	-13.0	-7.1	-
फ्रांस	0.5	-0.1	1.5	2.7	1.0	1.3	-1.2	-8.9	-15.7	-16.4	-10.6	-4.6	-
जर्मनी	8.9	6.7	6.3	5.9	5.3	3.3	0.4	-7.6	-21.8	-21.3	-17.4	-10.1	-
इटली	3.9	2.0	3.0	-1.5	1.0	0.2	-5.2	-10.4	-22.3	-23.2	-17.2	-9.3	-
जापान	2.9	2.4	2.6	3.3	2.5	0.8	-1.3	-14.1	-33.5	-26.6	-18.9	-4.2	26.0
यूके	-1.3	0.7	0.4	1.6	-0.6	-0.9	-2.1	-8.0	-12.6	-12.8	-11.0	-6.3	-
अमेरिका	1.3	1.5	1.4	1.8	1.2	-0.3	-3.2	-6.7	-11.5	-13.5	-9.2	-4.6	2.5

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, आईएमएफ; सीएसओ, भारत सरकार।

6.99 पिछले कुछ वर्षों के दौरान उत्साहजनक वृद्धि दखने के बाद औद्योगिक क्षेत्र व्यवसाय-चक्र के गिरते वक्र पर नवंबर 2007 से था (औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइआइपी) पर आधारित)। यह क्षेत्र हाल के वित्तीय संकट के स्पिलओवर प्रभाव से गंभीर रूप से प्रभावित हुआ, जिसके परिणामस्वरूप अक्तूबर 2008 से इसमें अधिक घोषित गिरावट आयी। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि में तीव्र गिरावट दर्ज की गयी। तथापि, औद्योगिक क्षेत्र में बदलाव आया और इसने वर्ष 2009-10 के दौरान तेज वृद्धि दर्ज की।

6.100 आइआइपी के चक्रीय घटक और वणिक माल निर्यात के बीच सहसंबंध काफी दुर्बल हुआ और वह संकुचित होते वणिक माल निर्यात की अवधि, अर्थात्, अक्तूबर 2008 से जून 2009 के दौरान उपेक्षणीय बन गया। इसके साथ-साथ, चक्रीय आइआइपी और खाद्येतर ऋण एवं एफडीआई के बीच सहसंबंध इस अवधि के दौरान और मजबूत हुआ, जिसका तात्पर्य यह है कि इस अवधि के दौरान औद्योगिक क्षेत्र में स्पष्ट गिरावट से वित्तीय सरणी का संबंध बढ़ रहा था (चार्ट VI.15)। हाल की अवधि के दौरान आइआइपी के चक्रीय घटकों और खाद्येतर ऋण के बीच सहसंबंध में तेज बढ़ोतरी आर्थिक मंदी और बढ़ी हुई अनिश्चितता की पृष्ठभूमि में संकट की अवधि के दौरान ऋण की घटती मांग के कारण हुई। सहसंबंध का यह तात्पर्य नहीं है कि वैरिएबलों के बीच कोई कारण-कार्य संबंध है और, इसीलिए, इस संबंध का अभिनिश्चय करने के लिए तकनीकी अभ्यास के साथ आगे अन्वेषण किया गया।

6.101 विभिन्न कारकों की भूमिका का और अन्वेषण करने के लिए औद्योगिक वृद्धि (आइआइपी पर आधारित), बैंक ऋण में वृद्धि (खाद्येतर ऋण) और निर्यात के बीच ग्रैंजर कारणत्व का अनुमान

चार्ट VI.15 : चक्रीय आइआइपी, निर्यात और एफडीआई की प्रवृत्ति

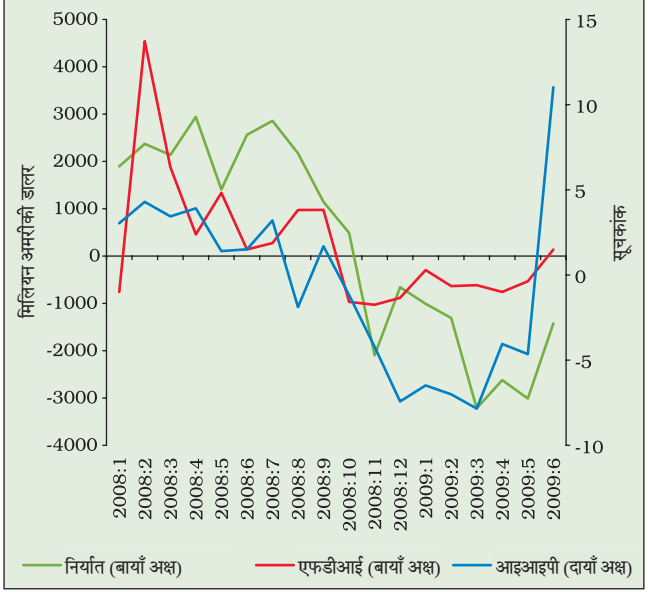

वेक्टर ऑटो रिग्रेसन मॉडल (वीएआर) से लगाया गया, जिसमें कारण-कार्य संबंध देखने के लिए वर्ष 1995-96 से 2009-10 तक के मासिक आँकड़ों का उपयोग किया गया। परिणाम[15] बैंक ऋण और औद्योगिक वृद्धि एवं निर्यात के बीच द्विदिशात्मक कारणत्व को चलता हुआ दिखाते हैं। औद्योगिक वृद्धि से बैंक ऋण तक चलता कारणत्व बैंक ऋण से औद्योगिक वृद्धि तक चलते कारणत्व की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण है। ग्रैंजर कारणत्व परिणामों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हाल के संकट की शुरुआत में न्यूनतर बैंक ऋण का कारण था उद्योग में मंदी आना, जिसने बदले में औद्योगिक मंदी और बैंक ऋण, दोनों को चक्र के भाग के रूप में और अधिक मंद किया। पुनः, वीएआर ग्रैंजर कारणत्व बताता है कि संकुचित होते निर्यात ने संकट-अवधि के दौरान औद्योगिक वृद्धि को बाधित किया। औद्योगिक वृद्धि से निर्यात वृद्धि तक कारणत्व संभवतः प्रौद्योगिकी सुधार और निर्यात के प्रतिस्पर्धात्मक प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है। सारांश रूप में, ग्रैंजर कारणत्व परिणाम बताते हैं कि वैश्विक संकट ने औद्योगिक क्षेत्र को संकुचित होते निर्यात और, बदले में, बैंक ऋण को प्रभावित किया।

भिन्न-भिन्न किस्म के विश्लेषण

6.102 भिन्न-भिन्न स्तरों पर, विनिर्माण क्षेत्र, जिसका आइआइपी में सबसे अधिक 74.4 प्रतिशत भारांक है, सबसे अधिक प्रभावित हुआ (सारणी 6.41)। विनिर्माण क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण मंदी ने अविलंब समग्र औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में तेज गिरावट को प्रतिबिंबित किया। अन्य क्षेत्र, यथा, खनन और उत्खनन एवं विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति, ने भी वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में मंदी देखी।

6.103 विनिर्माण क्षेत्र में चक्रीय मंदी अधिक व्यापक हो गयी, जिसमें 17 में से 15 विनिर्माण उद्योगों ने वर्ष 2008-09 के दौरान ऋणात्मक/कम वृद्धि का अनुभव किया। मंदी के पिछले दो चरणों के समान कपास, कपड़ा, काष्ठ और काष्ठ उत्पाद तथा फर्नीचर और फिक्सचर ने वर्तमान चरण में ऋणात्मक वृद्धि का प्रदर्शन किया (सारणी 6.42)। तथापि, विनिर्माण क्षेत्र में दुबारा उछाल वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से महत्त्वपूर्ण धनात्मक वृद्धि के साथ आया, जिसने देशी कारकों और स्थिर होते अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों से ताकत पायी।

सारणी 6.41 : उद्योग के व्यापक क्षेत्रों का कार्यसंपादन

	2005ति2-2008ति1	2008: ति2	2008: ति3	2008: ति4	2009: ति1	2009: ति2	2009: ति3	2009: ति4	2010: ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
मूल्य योजन में वृद्धि (%)									
खनन एवं उत्खनन	4.6	2.6	1.6	2.7	-0.3	8.2	10.1	9.6	14.0
विनिर्माण	11.6	5.9	5.5	1.3	0.6	3.8	9.1	13.8	16.3
विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति	8.4	3.3	4.3	4.0	4.1	6.6	7.7	4.7	7.1
उद्योग	10.3	5.2	4.9	1.7	0.8	4.6	9.0	12.3	15.1
मूल्य योजन में आपेक्षिक अंशदान (%)									
खनन एवं उत्खनन	5.2	5.8	3.8	19.3	-5.0	20.6	12.3	9.6	11.6
विनिर्माण	86.6	87.8	87.5	58.5	56.0	65.0	79.2	86.7	83.9
विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति	8.3	6.4	8.8	22.3	48.9	14.5	8.5	3.7	4.5

[15] **वीएआर ग्रैंजर कारणत्व/ब्लॉक एक्सोजेनिटी वॉल्ड परीक्षण**

नल्ल हाइपोथेसिस	चाइ स्क्वेयर स्टैटिस्टिक्स	स्वीकार/अस्वीकार करें (एक्स के कारण वाइ नहीं होता)
खाद्येतर ऋण में वृद्धि औद्योगिक वृद्धि का कारण नहीं बनती	12.55 (0.05)	अस्वीकार करें
निर्यात वृद्धि औद्योगिक वृद्धि का कारण नहीं बनती	25.04 (0.00)	अस्वीकार करें
औद्योगिक वृद्धि खाद्येतर ऋण में वृद्धि का कारण नहीं बनती	48.09 (0.00)	अस्वीकार करें
औद्योगिक वृद्धि निर्यात वृद्धि का कारण नहीं बनती	(75.60) (0.09)	अस्वीकार करें

सारणी 6.42 : 17 द्विअंकीय विनिर्माण उद्योगों का वृद्धि-कार्यसंपादन

(प्रतिशत)

उद्योग	2007-08				2008-09				2009-10			
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1. खाद्यान्न उत्पाद	26.8	-1.6	-4.9	9.9	-7.1	7.6	0.6	-25.2	-17.2	-5.2	0.7	10.2
2. पेय, तंबाकू और संबद्ध उत्पाद	9.7	8.8	17.7	11.9	30.7	9.8	12.2	12.5	-6.2	2.1	1.7	3.1
3. सूती कपड़े	7.3	5.0	2.0	2.9	3.5	-3.2	-3.5	-4.3	-1.7	4.3	9.9	9.7
4. ऊन, रेशम और मानव-निर्मित रेशेदार कपड़े	3.3	6.1	0.4	9.4	7.3	-8.8	1.3	0.5	4.8	21.2	10.7	-1.9
5. जूट एवं अन्य वानस्पतिक रेशेदार कपड़े (सूती को छोड़ कर)	30.1	9.9	-0.7	205.7	-8.1	-2.9	-23.2	-6.3	-16.2	-18.3	-6.3	-52.8
6. टेक्सटाइल उत्पाद (परिधान सहित)	5.9	0.7	6.1	2.3	6.3	4.0	3.8	8.7	8.2	11.0	12.8	2.5
7. काष्ठ एवं काष्ठ उत्पाद, फर्नीचर और फिक्सचर	93.0	66.9	45.8	-3.7	-11.9	-0.5	-10.0	-16.3	14.7	1.3	11.2	13.1
8. कागज और कागज के उत्पाद तथा मुद्रण, प्रकाशन और संबद्ध उद्योग	1.6	0.2	4.0	5.0	1.3	7.7	1.3	-2.8	3.6	-0.5	3.5	9.4
9. चमड़ा एवं चमड़ा और फर उत्पाद	8.5	10.8	11.4	16.2	5.8	-8.7	-10.5	-13.0	-3.5	4.8	1.3	7.1
10. रसायन और रासायनिक उत्पाद (पेट्रोलियम और कोयला के उत्पादों को छोड़ कर)	6.9	10.5	14.9	10.4	11.2	1.2	-4.6	8.8	2.0	13.8	21.9	5.5
11. रबर, प्लास्टिक, पेट्रोलियम और कोयला के उत्पाद	12.5	11.3	6.5	5.6	-3.5	-4.5	-0.9	2.7	10.6	14.3	18.4	17.8
12. गैर-धात्विक खनिज उत्पाद	6.6	10.6	3.8	2.3	1.0	0.1	1.9	1.7	8.3	4.9	6.5	11.1
13. मूल धातु और मिश्र उद्योग	20.1	16.9	6.8	6.8	4.9	8.4	5.0	-2.0	7.7	2.6	3.8	12.0
14. धातु-उत्पाद और पुर्जे (मशीन और उपकरण को छोड़ कर)	-0.1	-1.9	-16.9	-2.2	2.0	1.8	-0.4	-16.8	-4.8	4.9	16.4	45.9
15. परिवहन उपकरण से भिन्न मशीन और उपकरण	14.3	8.4	13.5	6.6	7.9	12.3	4.7	10.3	7.2	15.0	24.4	35.0
16. परिवहन उपकरण और पुर्जे	1.5	2.1	5.3	2.6	10.3	13.9	-10.9	-1.5	6.9	12.0	44.0	37.2
17. अन्य विनिर्माण उद्योग	7.4	18.2	35.8	17.1	-9.4	6.5	5.6	-2.7	14.9	12.3	1.3	16.6

6.104 विनिर्माण क्षेत्र में, निर्यातोन्मुख उद्योगों का समूह (यथा, मूल रसायन और रासायनिक उत्पाद, टेक्सटाइल उत्पाद, ऊन, रेशम और मानव-निर्मित फाइबर टेक्सटाइल, कॉटन टेक्सटाइल तथा चमड़ा एवं चमड़ा तथा फर उत्पाद), जिसने वर्ष 2003-08 में काफी वृद्धि का अनुभव किया था, देशोन्मुख इकाइयों के साथ पीड़ित हुआ। यह जानना रोचक होगा कि निर्यातोन्मुख और देशोन्मुख, दोनों प्रकार के उद्योगों में वर्ष 2009-10 (अप्रैल-सितंबर) के दौरान वृद्धि में महत्त्वपूर्ण तेजी के साथ उछाल आया, जो वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही की तुलना में काफी ऊँचा था (सारणी 6.43)।

6.105 बुनियादी वस्तुओं और उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योगों का वर्ष 2008-09 की पहली छमाही का कार्यसंपादन भी मंद रहा और वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में स्थिति में और गिरावट आई (सारणी 6.44)। सभी उप-समूहों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट/ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की गयी, लेकिन कुछ उप-समूहों, यथा, मध्यवर्ती वस्तुओं और बुनियादी वस्तुओं, में वर्ष 2009-10 के प्रारंभ से सुधरे हुए कार्यसंपादन के साथ बदलाव आया, जो मांग अभावी मंदी से उबरने का चित्रण करता है। निजी क्षेत्र के कारपोरेटों के कार्यसंपादन के वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में धीमा रहने के बाद उनके मार्जिन में बदलाव भी दिखाई पड़ा, बावजूद इसके कि उनकी बिक्री में वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही में गिरावट दिखाई पड़ी थी (बॉक्स VI.8)।

6.106 पिछले अंतरराष्ट्रीय संकटों के दौरान और उसके बाद उपयोग-आधारित उप-समूहों की प्रवृत्ति के विश्लेषण से वर्ष 2009-10 में देखी गयी औद्योगिक बहाली की धारणीयता के बारे में महत्त्वपूर्ण

सारणी 6.43 : निर्यातोन्मुख विनिर्माण उद्योगों में औसत वृद्धि (आइआइपी पर आधारित)

(प्रतिशत)

समूह	2000-03	2003-08	2008-09: छ1	2008-09: छ2	2009-10: छ1	2009-10: छ2
1	2	3	4	5	6	7
निर्यात-उन्मुख* (भारांक = 25.46)	4.3	8.8	4.4	2.1	7.4	11.0
देश-उन्मुख (भारांक = 53.90)	4.9	9.7	5.8	0.7	5.8	17.1
कुल विनिर्माण उद्योग (भारांक = 79.36)	4.7	9.4	5.3	0.4	6.3	15.4

टिप्पणी : इन उद्योगों की वृद्धि की गणना आइआइपी में उनके भारांकों के अनुसार सूचकांकों को जोड़ कर की गयी है।

* ऐसे पांच उद्योगों को लिया गया है, जिनका अधिकतर विक्रय निर्यात के माध्यम से होता है।

सारणी 6.44 : उपयोग आधारित उद्योगों की मासिक वृद्धि

(प्रतिशत)

	मूल वस्तुएँ			पूँजीगत वस्तुएँ			मध्यवर्ती वस्तुएँ			उपभोक्ता वस्तुएँ		
	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
अप्रैल	8.6	4.0	4.4	10.9	12.4	-5.9	10.6	3.1	7.9	14.7	8.5	-4.6
मई	10.3	3.0	3.8	22.4	4.3	-3.6	8.8	1.9	6.6	8.7	7.4	-1.1
जून	9.2	2.2	10.7	23.1	7.8	13.4	8.6	2.8	7.9	3.6	9.9	4.4
जुलाई	8.7	5.3	4.7	12.3	17.9	1.7	7.7	3.0	9.8	7.1	5.9	9.7
अगस्त	12.7	3.9	7.7	30.8	0.9	9.2	13.8	-5.5	14.4	0.0	6.4	10.9
सितंबर	6.5	5.0	5.3	20.9	20.8	13.5	10.1	-2.5	11.0	-0.2	7.4	9.7
अक्तूबर	6.5	3.2	4.0	20.9	4.2	10.2	13.9	-4.4	15.5	13.7	-0.9	12.1
नवंबर	5.2	2.2	6.0	24.2	0.5	11.1	5.5	-3.9	19.6	-2.9	9.4	12.2
दिसंबर	3.4	2.0	8.4	17.6	6.6	38.7	7.6	-8.9	22.8	8.7	1.7	13.1
जनवरी	3.6	-0.7	11.5	2.6	15.9	53.7	8.0	-7.2	21.9	8.4	3.6	3.0
फरवरी	7.3	-0.1	8.4	10.7	11.8	44.7	8.5	-3.0	15.0	11.7	-1.3	9.1
मार्च	3.3	1.9	10.4	20.3	-6.3	28.4	4.9	1.9	13.1	0.9	1.3	10.7
अप्रै.-मार्च	7.0	2.6	7.1	18.0	7.3	19.2	8.9	-1.9	13.6	6.1	4.7	7.3

स्रोत : सीएसओ, भारत सरकार

मार्गदर्शन प्राप्त हो सकता है। पूर्वी एशियाई संकट के दौरान औद्योगिक क्षेत्र की बहाली में पूँजीगत वस्तुओं ने अगुआई की, जबकि डॉट कॉम संकट के चरण में सभी क्षेत्रों ने मिल कर उद्योग को मंदी से बचाया, लेकिन पुन: यह पूँजीगत वस्तु-क्षेत्र ही था, जिसने इसमें सबसे बड़ा

बॉक्स VI.8

वैश्विक संकट और भारत में कारपोरेटों का कार्यसंपादन

वैश्विक संकट ने भारत में कारपोरेटों के कार्यसंपादन को संचरण की सभी तीन सरणियों, यथा, व्यापार, वित्तीय एवं विश्वास सरणी, के माध्यम से प्रभावित किया। निजी क्षेत्र के कारपोरेटों पर संकट का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बढ़ती विकृतियों की पृष्ठभूमि में, जो अंतत: वैश्विक मंदी/आर्थिक मंदी में परिवर्तित हुई, पड़ने लगा। महँगी होती देशी और विदेशी चलनिधि के परिणामस्वरूप निधियों की लागत में बढ़ोतरी हुई और उन तक पहुँच में कमी हुई। दूसरी ओर, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी से भारतीय कारपोरेटों के लिए मांग कम होने लगी, जैसाकि अक्तूबर 2008 से निर्यात के संकुचित होने से स्पष्ट होता है। विश्व-अर्थव्यवस्था में छायी अनिश्चितता ने भी निवेशक के विश्वास को कम किया और, इसीलिए, निजी कारपोरेट नया निवेश करने से हिचकते रहे। इन सभी कारकों ने देशी और बाह्य, दोनों प्रकार की मांगों को, निधियों की उपलब्धता को, और निवेश की संभावना को कम किया और ये वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान निजी क्षेत्र के कारपोरेटों के गिरते कार्यसंपादन में प्रतिबिंबित हुए। तथापि, कारपोरेट क्षेत्र के कार्यसंपादन में वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही के दौरान सुधार हुआ, जिसका कारण था वैश्विक वित्तीय बाजारों में स्थिरता के साथ देशी और बाह्य मांग, दोनों में पुनरुत्थान होना (सारणी 1)।

निजी कारपोरेटों की राजस्व-वृद्धि, जो वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान काफी प्रभावोत्पादक रही थी, में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में तेजी से गिरावट आयी। विक्रय-वृद्धि, 20 तिमाहियों तक (वर्ष 2004 की तीसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक) लगभग औसतन 22 प्रतिशत रहने के बाद वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में कम हो कर 9.5 प्रतिशत और और पुन: चौथी तिमाही में 1.9 प्रतिशत हो गयी। निजी कारपोरेटों के निवल लाभ में, वर्ष 2001-02 की तीसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2006-07 की तीसरी तिमाही तक की 21 तिमाहियों के लिए औसतन 42 प्रतिशत तेजी रहने के बाद, वर्ष 2006-07 की चौथी तिमाही से गिरावट आरंभ हुई और वह वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान और

सारणी 1. निजी कारपोरेट क्षेत्र का कार्यसंपादन

	2007-08	2008-09	2009-10	2008-09: ति1	2008-09: ति2	2008-09: ति3	2008-09: ति4	2009-10: ति1	2009-10: ति2	2009-10: ति3	2009-10: ति4
						वृद्धि (%)					
विक्रय	18.6	17.2	11.7	29.3	31.8	9.5	1.9	-0.9	0.1	22.5	29.1
व्यय	19.4	19.5	9.6	33.5	37.5	12.6	-0.5	-4.4	-2.5	20.6	30.7
सकल लाभ	24.9	-4.2	24.9	11.9	8.7	-26.7	-8.8	5.8	10.9	60.0	336.7
निवल लाभ	26.0	-18.4	28.8	6.9	-2.6	-53.4	-19.9	5.5	12.0	99.3	44.0
						अनुपात (विक्रय का %)					
ब्याज	2.5	3.1	2.7	2.4	2.9	3.8	3.2	2.8	3.1	2.7	2.4
सकल लाभ	14.9	13.3	14.8	14.5	13.5	11.0	13.7	15.7	14.9	14.3	14.6
निवल लाभ	9.8	8.1	9.4	9.7	8.6	5.3	8.1	10.2	9.4	8.8	9.0

(जारी..)

(... समाप्त)

गंभीर हो कर (-)53 प्रतिशत पर आ गयी, लेकिन वर्ष 2008-09 की चौथी तिमाही में उसमें 19 प्रतिशत की बढ़ोतरी के साथ बदलाव आया (चार्ट 1)। गौण 'अन्य आय', जिसमें अधिकांशत: विदेशी मुद्रा लाभ और खजाना आय समाविष्ट होते हैं, जिन्होंने पिछले दो वर्षों में निवल लाभ में महत्त्वपूर्ण रूप से योगदान किया था, में भी गिरावट दर्ज की गयी, जिसका कारण था वर्ष 2008-09 के दौरान शेयर बाजार में धीमा कार्यकलाप और रुपये के कमजोर पड़ने का प्रभाव होना।

चुनिंदा कंपनियों की बिक्री (जिसे 100 करोड़ रुपये से कम की वार्षिक बिक्री के रूप में परिभाषित किया जाता है), जो पहली दो तिमाहियों में वर्ष-दर-वर्ष 10 प्रतिशत से अधिक तक बढ़ी थी, वह सितंबर 2008 के बाद अचानक घट गयी। इसी प्रकार, बड़ी कंपनियों की बिक्री (जिसे 100 करोड़ रुपये से अधिक की वार्षिक बिक्री के रूप में परिभाषित किया जाता है) में वर्ष-दर-वर्ष लगभग 30 प्रतिशत वृद्धि वर्ष 2008-09 की पहली दो तिमाहियों में होने के बाद वह अंतिम दो तिमाहियों में घट गयी। परिचालन-मार्जिन वर्ष 2007-08 की तीसरी तिमाही में दर्ज मार्जिन की तुलना में लगभग 400 आधार अंकों तक कम हो गया। तथापि, मार्जिन पर दबाव वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से कम होता प्रतीत होता है, जिसका कारण मुख्य रूप से गिरती निविष्टि लागत और ब्याज बहिर्वाह में न्यून वृद्धि को माना जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप मार्जिन में सुधार उस स्तर तक हुआ, जो सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के धराशायी होने के पूर्व दर्ज किया गया था।

क्षेत्रीय स्थिति के बिगड़ने के संदर्भ में विनिर्माण क्षेत्र में कंपनियों के लिए बिक्री और लाभ संबंधी कार्यसंपादन में ढिलाई आईटी और अन्य सेवा-क्षेत्रों की तुलना में अधिक स्पष्ट थी। निवल लाभ मार्जिन, जिसे बिक्री की तुलना में निवल आय अनुपात के

चार्ट 1 : भारत में निजी कारपोरेट क्षेत्र का वृद्धि-कार्यसंपादन (वर्ष-दर-वर्ष प्रतिशत)

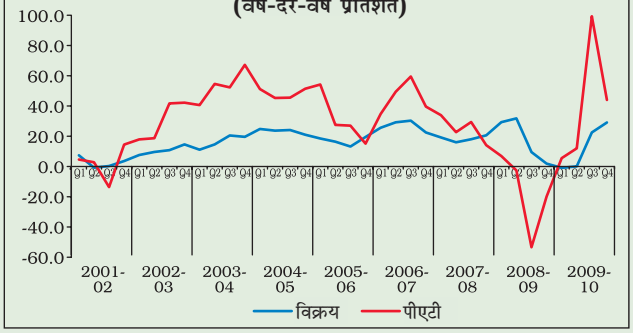

रूप में पाया गया, विनिर्माण क्षेत्र के लिए अधिकतर न्यूनतम रहा है और वर्ष 2007-08 की तीसरी तिमाही में दहाई अंकों के स्तर पर रहने के बाद वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान घट कर 5.0 प्रतिशत हो गया। तथापि, निवल मार्जिन वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही में धीरे-धीरे वापस 10 प्रतिशत के निकट आ गया है। तुलनात्मक दृष्टि से, सेवा-क्षेत्र की कंपनियाँ वर्ष 2008-09 की तिमाहियों के दौरान घटती बिक्री के बावजूद लाभ-मार्जिन बनाये रखने में समर्थ हुई हैं; वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान पण्य मूल्यों में बढ़ोतरी का कम प्रभाव सेवा-क्षेत्र के उद्योगों पर पड़ा, क्योंकि उनके कुल व्यय में कच्चे माल की खपत का हिस्सा अपेक्षाकृत कम रहा था।

योगदान किया। पिछले दो अंतरराष्ट्रीय संकटों के दौरान प्राप्त अनुभवों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि पूँजीगत वस्तु-क्षेत्र की बहाली औद्योगिक क्षेत्र के वर्तमान मंदी से उबरने में महत्त्वपूर्ण रही है, जो निवेश में तेजी लाने की आवश्यकता को रेखांकित करती है। इस प्रकार, वर्ष 2009-10 क दौरान पूँजीगत वस्तुओं की वृद्धि में उछाल से पता चलता है कि औद्योगिक बहाली दृढ़ और धारणीय हो गयी है।

6.107 मुख्य आधारभूत संरचना उद्योग, जो औद्योगिक क्षेत्र का एक बड़ा भाग होता है (आइआइपी में 27 प्रतिशत भारांक), पर भी वर्तमान वैश्विक संकट का स्पिलओवर प्रभाव हुआ। आधारभूत संरचना क्षेत्र को, जिसके विगत अतीत में उच्च वृद्धि के प्रक्षेप-पथ पर चलते रहने के बावजूद घाटा होता रहा और बड़ी बाधाएँ आती रहीं, सितंबर 2008 में विस्तारित वैश्विक संकट के आरंभ से अपेक्षित निधियों के उपलब्ध नहीं होने से, विशेषकर निजी क्षेत्र की परियोजनाओं में, नुकसान उठाना पड़ा। वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान विभिन्न आधारभूत संरचना उद्योगों में लक्ष्य और उपलब्धियों के बीच अंतराल और बढ़ गया, जो वैश्विक संकट को प्रतिबिंबित करता है (सारणी 6.45)। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में यह परिकल्पित था कि आधारभूत संरचना में सकल देशी पूँजी निर्माण को, जो वर्ष 2006-07 में जीडीपी का 5 प्रतिशत था, वर्ष, 2011-12 में बढ़ा कर 9 प्रतिशत किया जायेगा, ताकि उपलब्धता में सुधार हो और मांग एवं आपूर्ति के बीच अंतराल को पाटा जा सके।

सेवा-क्षेत्र : भिन्न-भिन्न प्रकार के विश्लेषण

6.108 सेवा-क्षेत्र की उच्च वृद्धि भारत की वृद्धि में उछाल का समर्थन करती रही है। इस क्षेत्र ने वर्ष 2008-09 के पहले के पाँच वर्षों के

सारणी 6.45 : आधारभूत संरचना उद्योगों के लक्ष्य और उपलब्धि के बीच अंतराल

(प्रतिशत)

क्षेत्र	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4
विद्युत	-0.8	-6.5	-2.3
कोयला	-1.0	-0.9	0.1
तैयार इस्पात	-3.1	-7.3	-
रेलवे	0.5	-2.0	-0.2
नौवहन (प्रमुख पत्तनों पर संचालित कार्गो)	0.7	-7.9	-3.5
उर्वरक	-12.6	-12.2	-0.1
कच्चा पेट्रोलियम	-2.5	-6.8	-11.4
पेट्रोलियम उत्पाद	6.7	-2.4	4.5
प्राकृतिक गैस उत्पादन	-2.9	-11.1	-8.8

स्रोत : सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार

दौरान औसतन 10 प्रतिशत संभावित वृद्धि का प्रदर्शन किया और जीडीपी में इसके आपेक्षिक योगदान का हिस्सा इस अवधि के दौरान क्रमश: 60 प्रतिशत और 70 प्रतिशत से अधिक था। समग्र मूल्ययोजित में सेवा-निर्यात का योगदान, जो वर्ष 2000-01 में 6.9 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से बढ़ कर 15.1 प्रतिशत हो गया। वैश्विक आर्थिक संकट के संचयी प्रभाव की पृष्ठभूमि में वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान वृद्धि में गिरावट के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था की समग्र वृद्धि की तुलना में सेवा-क्षेत्र में उच्च गति से वृद्धि होती रही। हाल के संकट के दौरान सेवा-क्षेत्र द्वारा प्रदर्शित समुत्थान शक्ति ने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए गुंजाइश बनायी कि उसे अधिकांश उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा देखी गयी वृद्धि में विकृति का अनुभव नहीं करना पड़े, खास कर डगमगाते औद्योगिक क्षेत्र की पृष्ठभूमि में। यह जानना रोचक होगा कि सेवा-क्षेत्र ने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए इसी प्रकार की गुंजाइश पिछले अंतरराष्ट्रीय संकटों, यथा, खाड़ी संकट (1990-1991), पूर्वी एशिया संकट (1997-1998) और प्रौद्योगिकी संकट (2000-2001), के दौरान बनायी थी (चार्ट VI.10)।

6.109 सेवा-क्षेत्र का भिन्न-भिन्न प्रकार का विश्लेषण दर्शाता है कि अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों के प्रकट होने से विभिन्न समयों में भिन्न-भिन्न उप-समूहों पर प्रभाव पड़ा था। यह जानना रोचक होगा कि जब एक उप-समूह पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था, तब दूसरे उप-समूह के बेहतर कार्यसंपादन ने सेवा-क्षेत्र की समग्र वृद्धि पर प्रभाव का शमन किया था। उदाहरण के लिए, वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में वित्तीय, बीमा, स्थावर संपदा और व्यवसाय सेवा उप-समूह पर गंभीर प्रभाव पड़ा था, लेकिन दूसरा उप-समूह - व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार - में ऊँची गति से वृद्धि होती रही और उसने सेवा-क्षेत्र में तीव्र ह्रास से बचाने के लिए गुंजाइश बनायी। इसी प्रकार, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार की वृद्धि में कमी आयी, लेकिन वित्तीय, बीमा, स्थावर संपदा और व्यवसाय सेवा के उप-समूह में सुधार हुआ और इसके साथ सामुदायिक और सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाओं की वृद्धि में तेजी आयी, जिसने सेवा-क्षेत्र की वृद्धि के लिए गुंजाइश बनायी (सारणी 6.46)।

6.110 सारांशत: यह कहा जा सकता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही में मंदी के आरंभिक संकेत देखे थे, लेकिन संकट का वास्तविक प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में महसूस किया गया। हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था में चक्रीय गिरावट को बढ़ा दिया, जिसके चलते निजी उपभोग और निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। औद्योगिक वृद्धि में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जबकि सेवा-क्षेत्र ने वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान उद्योग की तुलना में वृद्धि में संयत गिरावट दर्ज की। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक के चक्रीय घटक और खाद्येतर ऋण के बीच सहसंबंध में तीव्र गिरावट का कारण आर्थिक मंदी और बढ़ी हुई अनिश्चितता की पृष्ठभूमि में संकट की अवधि के दौरान ऋण की मांग में कमी होना हो सकता है। भारत में कारपोरेटों के कार्यसंपादन संचरण की सभी सरणियों के माध्यम से प्रभावित हुए, यथा, व्यापार, वित्तीय, पण्य-मूल्य और विश्वास सरणियाँ। सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में नरमी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों के अनुरूप देशी वित्तीय बाजारों में बढ़ी हुई अस्थिरता और अनिश्चितता के कारण आयी। तथापि, भारतीय

चार्ट VI.16 : सेवाओं का आपेक्षिक अंशदान

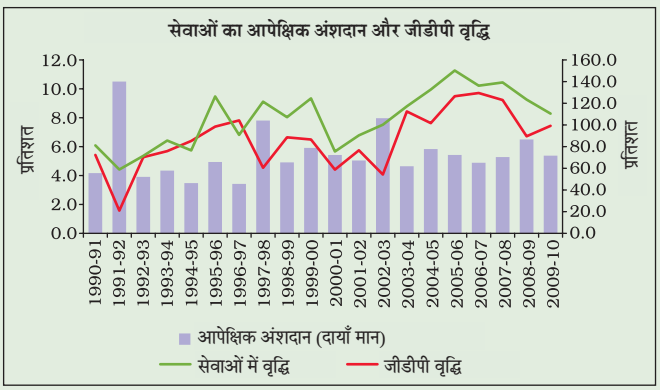

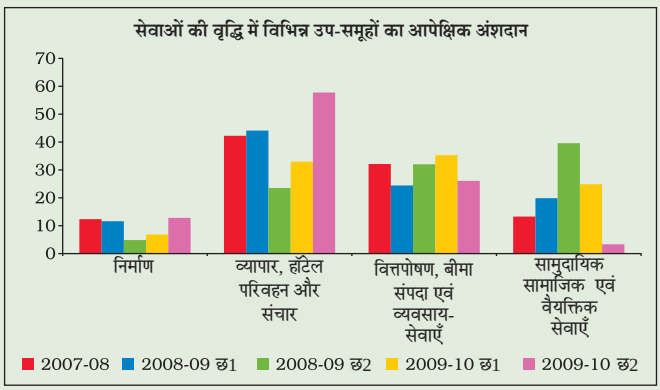

सारणी 6.46 : भिन्न-भिन्न स्तरों पर सेवा-क्षेत्र की वृद्धि
(वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

वर्ष	निर्माण	व्यापार, होटेल, परिवहन, संचार	वित्तपोषण, बीमा, स्थावर संपदा एवं व्यवसाय-सेवाएँ	सामुदायिक, सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाएँ	सेवाएँ
1	2	3	4	5	6
प्रवृत्ति					
2000-2002	5.1	8.2	5.7	4.4	6.3
2002-2005	12.0	10.7	7.4	5.4	8.7
2006-2008	11.0	11.5	13.5	5.7	10.6
वार्षिक					
2007-08	10.0	10.7	13.2	6.7	10.4
2008-09	5.9	7.6	10.1	13.9	9.3
2009-10	6.5	9.3	9.7	5.6	8.3
छमाही					
2007-08:छ1	11.9	10.7	13.9	5.6	10.6
2007-08:छ2	8.3	10.8	12.6	7.7	10.3
2008-09:छ1	8.5	10.4	8.8	9.6	9.6
2008-09:छ2	3.4	5.1	11.3	17.8	9.0
2009-10:छ1	4.6	7.0	11.7	11.0	8.7
2009-10:छ2	8.4	11.3	7.9	1.2	7.9
त्रैमासिक					
2008-09:ति1	9.8	10.8	9.1	8.7	9.8
2008-09:ति2	7.2	10.0	8.5	10.4	9.3
2008-09:ति3	1.1	4.4	10.2	28.7	10.0
2008-09:ति4	5.7	5.7	12.3	8.8	8.0
2009-10:ति1	4.6	5.5	11.8	7.6	7.5
2009-10:ति2	4.7	8.5	11.5	14.0	10.0
2009-10:ति3	8.1	10.2	7.9	0.8	7.3
2009-10:ति4	8.7	12.4	7.9	1.6	8.5

अर्थव्यवस्था मंदी से उबर गयी है, जिसमें विशेष रूप से वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही से औद्योगिक क्षेत्र और बाह्य व्यापार के क्षेत्र में ठोस बहाली हुई है।

V. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

6.111 हाल का वैश्विक संकट अपनी तीव्रता और सभी देशों में समकालिकता के संदर्भ में अनोखा था। भारत में संपदा क्षेत्र में वैश्विक आघातों का संचरण विविध सरणियों के माध्यम से कार्यान्वित हुआ, यथा, व्यापार, वित्त, प्रत्याशा और पण्य-मूल्य सरणियाँ। भारतीय संदर्भ में, जबकि परंपरागत रूप से व्यापार सरणी संपदा क्षेत्र में आघातों के संचरण की प्रमुख वाहक थी, वित्तीय सरणी कालक्रम में तगड़े रूप में उभर कर आयी। यहाँ तक कि व्यापार सरणी भी कालक्रम में अपेक्षाकृत प्रमुख बन गयी, जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के लिए जीडीपी की तुलना में व्यापार का अनुपात बढ़ता गया।

6.112 पिछले कुछ वर्षों के दौरान भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता वित्तीय खुलापन से ताकतवर बनती गयी है। सब-प्राइम संकट के प्रारंभ होने के बाद यह वाद-विवाद का विषय बन गया था कि क्या भारत, अन्य ईएमई के साथ, निरापद बना रहा और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से, जो गंभीर मंदी का अनुभव कर रही थीं, अलग हो गया। तथापि, भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में भी वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से गिरावट आने लगी, जो उन्नत देशों और ईएमई के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता को प्रतिबिंबित करती है और जिसने वियोजन परिकल्पना को अमान्य बना दिया।

6.113 हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव का अनुभव सीधे व्यापार सरणी के माध्यम से किया गया, जिसमें निर्यात-मांग प्रमुख रूप से बाह्य-मांग स्थितियों से निर्धारित की जाती थी। ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण से निर्यात से जीडीपी तक कारणत्व संबंध की दिशा का पता चला, लेकिन इसके विपरीत स्थिति का पता नहीं चला। पण्यवार पैटर्नों ने दर्शाया कि इंजीनियरी वस्तुएँ वैश्विक अर्थव्यवस्था के प्रति अधिक अनुक्रियाशील थीं। दूसरी ओर, व्यापार घाटा अनुपात और आर्थिक वृद्धि के बीच कारणत्व संबंध की दिशा बाद वाले से पहले वाले की ओर थी, जिसका कारण देशी आर्थिक कार्यकलाप द्वारा प्रेरित आयात-मांग की भूमिका को माना जा सकता है। इस प्रकार, चूँकि आयात-मांग भी देशी कार्यकलाप के आगे-पीछे के क्रम में संकुचित हुई, अत: भुगतान संतुलन की स्थिति पर बाह्य मांग में गिरावट के प्रतिकूल प्रभाव को रोका गया। यह महसूस किया गया कि अधिक धारणीय आधार पर निर्यात की संभावना में सुधार करने के लिए विविधीकरण पर, जो बाजारों और निर्यात मद, दोनों के संदर्भ में हो, और प्रतिस्पर्धात्मकता पर जोर दिया जाना चाहिए और इसके लिए इस क्षेत्र को कर-विराम, निर्यात के लिए प्रयुक्त निविष्टियों पर कम उत्पाद एवं सीमा-शुल्क, तथा निर्यातकों के वित्तपोषण के लिए रियायती ब्याज दर, जैसे प्रोत्साहनों पर निर्भर नहीं रहने दिया जाना चाहिए, भले ही ऐसे प्रोत्साहन निर्यात क्षेत्र की अस्थायी सहायता के रूप में वैश्विक मांग में गिरावट के चरण में आवश्यक हो जायें।

6.114 भारत में वैश्विक आघातों का संचरण सेवा-क्षेत्र के माध्यम से भी हुआ, जैसेकि यात्रा, सॉफ्टवेयर एवं अन्य आइटीईएस-बीपीओ

सेवाएँ। वैश्विक आघातों ने पर्यटकों के आगमन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया और, इसीलिए, यात्रा से संबंधित सेवाओं की मांग में, यथा, हॉटेल और परिवहन, में गिरावट दिखाई दी। आइटीईएस-बीपीओ सेवाएँ, जो निर्यात पर अत्यधिक निर्भर होती हैं, पर निर्यात में हानि के रूप में वैश्विक आघात का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव हुआ, जिसने अप्रत्यक्ष, लेकिन महत्त्वपूर्ण रूप से इस क्षेत्र से उद्भूत रोजगार एवं देशी मांग को प्रभावित किया।

6.115 पण्य-मूल्य सरणी ने मुख्य रूप से प्राथमिक वस्तुओं, यथा, खाद्यान्न, धातुएँ, तेल और खनिज के अंतरराष्ट्रीय मूल्य पर आघात के माध्यम से कार्य किया। किसी अर्थव्यवस्था में मूल्यों और वास्तविक कार्यकलापों पर ऐसे आघातों का प्रभाव उपभोग-समूह में उनके भारांक पर निर्भर करता है। भारत में तेल-मूल्य पर, जो प्रमुख रूप से आयात पर निर्भर होता है, आघात ने महत्त्वपूर्ण रूप से अतीत में देशी मूल्यों और वास्तविक कार्यकलाप को प्रभावित किया था। हाल के वैश्विक संकट के दौरान, तेल-मूल्य आघातों के कारण देशी मुद्रास्फीति में बड़ा उतार-चढ़ाव आया। हाल की अवधि में, हालाँकि कुल आयात-समूह में भारत के खाद्यान्न-आयात में काफी गिरावट आयी, फिर भी पण्य बाजारों के द्रुत वित्तीयकरण के माध्यम से खाद्यान्न मूल्यों के वैश्विक एकीकरण के परिणामस्वरूप देशी और विश्व खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति में सहसंबंध बढ़ा। वास्तव में हाल की अवधि में वैश्विक पण्य-चक्र यह प्रकट करता है कि भारत में खाद्यान्न मूल्यों का विस्तारक चरण वैश्विक पण्य-मूल्य चक्र का अनुगामी हुआ।

6.116 भारत में उपभोग मांग, हालाँकि यह प्रमुख रूप से घरेलू उपभोग से प्रेरित होता है, पर बाह्य आघातों का अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। पहला, धन-प्रेषण के अंतर्वाह में गिरावट, जो अमरीकी अर्थव्यवस्था में मंदी होने और मध्य-पूर्व के देशों में तेल की कीमतों के अचानक कम हो जाने, दोनों प्रकार से प्रभावित हुआ था, ने भारत में उपभोग-मांग पर प्रभाव डाला प्रतीत होता है, क्योंकि भारत में प्रत्यावर्तित धन का एक बड़ा हिस्सा परिवार के निर्वाह के लिए होता है। अनुभवमूलक साहित्य भी यह बताता है कि निजी उपभोग मांग और भारत को भेजे गये धन-प्रेषण के बीच कुछ संबंध है। दूसरा, निर्यात पर निर्भर और रोजगार-प्रधान क्षेत्रों, यथा, रत्न एवं आभूषण, सूती कपड़ा, चमड़े की वस्तुएँ, और आइटीईएस-बीपीओ सेवाएँ, के रोजगारजन्य संघात का सीधा परिणाम इन क्षेत्रों में रोजगार की महत्त्वपूर्ण हानि हुआ और, इसीलिए, इसने उपभोग मांग पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। तीसरा, बाह्य मांग में हानि द्वारा सृजित अनिश्चितता और अस्थिर वैश्विक वित्तीय बाजारों ने देशी फर्मों के निर्णयों को प्रभावित किया, जिसके चलते देशी निवेश मांग में समग्र संपीडन हुआ।

6.117 वित्तीय सरणी का प्रभाव मुख्य रूप से संविभाग प्रवाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, बैंकिंग पूँजी और व्यापार ऋण के माध्यम से निष्पादित हुआ। 1980 के दशक ने भारत में पूँजी-प्रवाह में प्रणाली-बदलाव की घोषणा की, जिसमें निजी पूँजी-प्रवाह बाह्य वाणिज्यिक उधारों (ईसीबी), अनिवासी भारतीय (एनआरआई) जमाराशियों और अल्पावधि व्यापार ऋण के माध्यम से हुआ। 1990 के दशक में विदेशी निवेश प्रणाली के उदारीकरण से भारत में पूँजी प्रवाह में और भी बदलाव आया, खास कर इक्विटी प्रवाह में। पूँजी प्रवाह जटिल रूप से ब्याज दरों, शेयर मूल्यों, विनिमय दरों और पण्य मूल्यों से जुड़े रहे हैं।

6.118 वैश्विक वित्तीय संस्थाओं और हेज फंडों द्वारा डिलिवरेजिंग का परिणाम वर्ष 2008-09 में भारत में पूँजी अंतर्वाह का प्रतिवर्तन के रूप में हुआ, जिसने अर्थव्यवस्था को इक्विटी मूल्यों में तीव्र गिरावट, विनिमय दर और ब्याज दर उतार-चढ़ाव के माध्यम से प्रभावित किया। एफआइआइ अंतर्वाह में प्रतिवर्तन का सीधा योगदान इक्विटी मूल्यों में गिरावट में हुआ, जिसने बदले में कारपोरेटों की पूँजी बाजारों में पहुँच को कम किया, क्योंकि उनके तुलनपत्र दुर्बल हुए और प्राथमिक बाजार अनकदी हो गया। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में ऋण की शर्तों को कठोर किये जाने से भारतीय फर्मों की समुद्रपार बांड बाजारों तक पहुँच कम हो गयी। इसके साथ-साथ, व्यापार ऋण तक पहुँच में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जिसमें पुनर्निर्धारण की समस्या ने आयात मांग के संपीडन की अगुआई की। बैंकिंग पूँजी में भी महत्त्वपूर्ण बहिर्वाह देखा गया, जिसने बदले में देशी ऋण-स्थिति में ह्रास की अगुआई की। पूँजी अंतर्वाह का प्रभाव अर्थव्यवस्था में निवेश मांग की वृद्धि में गिरावट में प्रतिबिंबित हुआ।

6.119 निवल पूँजी अंतर्वाह में काफी गिरावट आने के बावजूद, जो वर्ष 2007-08 में 107 बिलियन अमरीकी डालर था और वर्ष 2008-09 में घट कर 7.2 बिलियन अमरीकी डालर हो गया, अर्थव्यवस्था के बाह्य क्षेत्र में समुत्थान-शक्ति दिखाई पड़ी, क्योंकि वर्ष 2008-09 के दौरान आरक्षित निधि में हानि (मूल्यन को छोड़ कर)

केवल 20 बिलियन अमरीकी डालर की हुई थी। पूरे वर्ष के लिए चालू खाता घाटा, जो वर्ष 2007-08 में जीडीपी का 1.5 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 2.4 प्रतिशत हो गया। पर्याप्त विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि बनाये रखने का महत्त्व, भले ही वह अधिकतर नमनीय विनिमय दर प्रणाली के साथ हो, वर्ष के दौरान स्पष्ट हो गया, जब एक सबसे बड़े गंभीर बाह्य आघात पर नियंत्रण चालू और पूँजीगत खातों में विनिर्दिष्ट लेन देनों का नियंत्रण करने के लिए किसी आपवादिक उपाय के बिना किया जा सका।

6.120 व्यापार, वित्तीय और पण्य-मूल्य सरणियों के माध्यम से वृद्धि पर अंतिम प्रभाव प्रतिबिंबित हुआ। वृद्धि, जिसमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में चक्रीय गिरावट के साथ कमी आयी थी, उसमें वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में और भी कमी आयी, जिसका कारण वैश्विक संकट की छूत को माना जा सकता है। निजी उपभोग और सकल देशी पूँजी निर्माण में महत्त्वपूर्ण गिरावट के साथ सिकुड़ते बाह्य मांग ने सरकारी क्षेत्र की उपभोग और निवेश, दोनों की मांग में विस्तार को आवश्यक बना दिया। वास्तव में, यह पाया गया है कि जीडीपी वृद्धि में चक्रीय उतार-चढ़ाव मुख्यत: चक्रीय निजी उपभोग और सकल देशी पूँजी निर्माण से प्रेरित रहे हैं।

6.121 औद्योगिक क्षेत्र में अनेक उन्नत देशों और ईएमई में वर्तमान संकट के दौरान मंदी देखी गयी और भारत में औद्योगिक क्षेत्र की गतिविधि का हाल की अवधि में उन्नत देशों और ईएमई के साथ अधिक सहसंबंध देखा गया है। सेवा-क्षेत्र में भी वैश्विक संकट से उत्पन्न गिरावट का असर हुआ, लेकिन इसने तगड़ी समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया और भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि-दर के लिए गुंजाइश बनायी। यद्यपि भारत के सेवा-क्षेत्र की अनेक ज्ञान आधारित सेवाओं में प्रतिस्पर्धात्मक तीक्ष्णता है, फिर भी भारत को अपनी भौतिक आधारभूत संरचना में श्रेष्ठ मानव संसाधन के साथ शेष सेवाओं में प्रतिस्पर्धात्मक तीक्ष्णता में सुधार लाने की जरूरत है। सेवा-क्षेत्र विविध प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहा है, भले ही इसमें हाल की अवधि में उच्च वृद्धि और समुत्थान-शक्ति दिखाई पड़ी है। इस संबंध में शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में नीतिगत ढाँचे में सुधार के लिए ध्यान दिया जाना होगा, जबकि व्यावसायिक, विधिक, डाक, लेखाशास्त्र और बीमा जैसी संभावित सेवाओं के लिए और अधिक उदारीकरण के साथ संभावनाएँ तलाशनी होंगी।

6.122 पर्याप्त आधारभूत संरचना की उपलब्धता विकास प्रक्रिया की सफलता की कुंजी होती है। तथापि, आधारभूत संरचना के लिए अधिक वित्तपोषण जरूरी होता है और इसके लिए सरकारी और निजी क्षेत्र, दोनों में सहयोग की आवश्यकता होती है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में इस दिशा में 500 बिलियन अमरीकी डालर के निवेश का अनुमान किया गया है। हाल के वैश्विक संकट ने निवेश वातावरण को मंद बनाते हुए इस निवेश को महसूस करना वास्तव में चुनौतीपूर्ण बना दिया। यहाँ चुनौती यह है कि निवेश को पूँजी पर प्रत्याशित प्रतिलाभ के संदर्भ में आकर्षक बनाया जाये, जबकि यह उपभोक्ताओं के लिए और आधारभूत संरचना का वास्तविक उपयोग करने वालों के लिए भी उचित हो, ताकि इसमें निजी क्षेत्र की भागीदारी हो सके। हाल के वर्षों में आधारभूत संरचना क्षेत्रों, यथा, दूर संचार, विद्युत-उत्पादन, विमान पत्तन, बंदरगाह, सड़क और रेलवे, में सरकारी-निजी भागीदारी (पीपीपी) के माध्यम से निजी निवेश को आकृष्ट किया जाना इंद्रियगोचर हुआ है।

6.123 भारत सरकार और रिज़र्व बैंक ने युक्तियुक्त नीतिगत उपायों के साथ कार्रवाई की और वे प्रगामी ढंग से लागू किये गये। जबकि भारतीय रिज़र्व बैंक ने प्रणाली में देशी और विदेशी मुद्रा चलनिधि, दोनों में सुधार करने के लिए द्रुत गति से और नपे-तुले उपाय किये, सरकार ने शिथिल सकल मांग को बढ़ाने के लिए प्रतिचक्रीय प्रोत्साहन उपायों को क्रियान्वित किया। मौद्रिक और राजकोषीय नीतिगत उपाय, दोनों ही वांछित परिणाम लाने में सफल प्रतीत होते हैं, जैसाकि वर्ष 2009-10 में जीडीपी वृद्धि की बहाली होने से स्पष्ट होता है। औद्योगिक क्षेत्र वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में देखी गयी मांग अभावी मंदी से उबरा है और इसमें वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से वृद्धि में उछाल दिखाई पड़ता है। तथापि, सेवा-क्षेत्र में वर्ष 2009-10 में वृद्धि में गिरावट का अनुमान किया जाता रहा, हालाँकि दूसरी तिमाही में वृद्धि की गति छठे वेतन आयोग के बकाये के भुगतान के कारण तेज हुई। सेवा-क्षेत्र को कुछ अंतराल के साथ औद्योगिक क्षेत्र के साथ प्रतिक्रिया करते देखा गया है और वर्तमान औद्योगिक बहाली से उद्योग-संबद्ध सेवाओं, यथा, यात्रा, परिवहन, वित्तपोषण, और व्यवसाय-सेवाओं, में वृद्धि की गति तेज होगी, जिससे सेवा-क्षेत्र की गति ऊर्ध्वमुखी हो सकेगी।

6.124 पूरी दुनिया में विस्तारक मौद्रिक दृष्टिकोण के समय और अनुक्रमण के बारे में काफी वाद-विवाद हो रहा है। तथापि, वर्तमान मौद्रिक नीतिगत सहायता से निकास का कार्य विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार से हो सकता है, जो वृद्धि और मूल्य स्थिरता की जोखिम के संतुलन पर, तुलनपत्र समायोजनों के प्रकार पर, जो संकट के दौरान किये गये हों, और व्यवसाय -चक्र में अर्थव्यवस्था की स्थिति पर, निर्भर करेगा। उन्नत देशों के मामले में, जहाँ केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र, जो बंधक समर्थित प्रतिभूतियों, वाणिज्यिक पत्रों और कारपोरेट बांडों को समाविष्ट करने वाले संविभाग के साथ काफी विस्तारित हुए हैं, निकास नीति विनिर्दिष्ट बाजार खंडों में पुनरुत्थान में तेजी और गतिविधियों द्वारा बाधित हो सकती है। इसके विपरीत, भारत में केंद्रीय बैंक निभाव मुख्यत: एमएसएस को उन्मुक्त किये जाने, ओएमओ के संचालन, जिसमें एलएएफ शामिल है, और बैंकिंग प्रणाली में विशेष पुनर्वित्त सुविधाओं के माध्यम से किये गये। इस प्रकार, भारत में मौद्रिक सहायता का प्रत्याहार विनिर्दिष्ट बाजार खंड पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना करना संभव होगा (मोहान्ती, 2009)।

6.125 वर्ष 2009-10 की मौद्रिक नीति की अक्तूबर 2009 में की गयी समीक्षा में भारतीय अर्थव्यवस्था में बहाली का प्रबंध करते समय अनुभव की गयी चुनौतियाँ सामने आयीं। रिज़र्व बैंक के सामने स्पष्ट चुनौती मूल्य स्थिरता से समझौता किये बिना बहाली प्रक्रिया का समर्थन करना है। इसके लिए समझौताकारी समन्वयन का सतर्कतापूर्वक प्रबंध करना आवश्यक है। वृद्धि के प्रेरक तत्व विलंबित निकास की अपेक्षा करते हैं, जबकि मुद्रास्फीति संबंधी चिंता के चलते शीघ्र निकास अपेक्षित है। समय पूर्व निकासी से कमजोर वृद्धि पटरी से उतर जायेगी, लेकिन विलंबित निकास से सभवत: मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं का उद्भव होगा। वर्तमान संधि-काल में संतुलित निर्णय यह होगा कि 'निकास' का अनुक्रम नपे-तुले ढंग से रखा जाये, ताकि बहाली की प्रक्रिया बाधित न हो और मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को थामा जा सके। इस प्रकार 'निकास' की प्रक्रिया कुछ विशेष चलनिधि-सहायता उपायों को समाप्त किये जाने के साथ आरंभ हुई। रिज़र्व बैंक ने 'निकास' का पहला चरण अक्तूबर 2009 में आरंभ किया, जिसमें संकट के दौरान किये गये अधिकांश गैर-परंपरागत उपायों को वापस लिया गया, जिसके बाद सीआरआर और नीति-दरों में बढ़ोतरी की गयी। सरकार ने भी तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशों पर कार्रवाई करते हुए विस्तारक राजकोषीय दृष्टिकोण से निकास की शुरुआत की, जिसमें अंशत: अप्रत्यक्ष कर की दरों को वापस लिया गया और वर्ष 2010-11 के बजट में गैर-योजना व्यय को कम किया गया।